FROM
TB SURVIVORS
TO
TB CHAMPIONS
Stories From Bihar

FROM
TB SURVIVORS
TO
TB CHAMPIONS
Stories From Bihar

Copyright: REACH 2019.

This publication is intended for circulation; please feel free to share it widely provided no changes are made. If you intend to extract or use any sections of this publication in other documents, you may do so provided you use the following citation and acknowledge the source: **From TB Survivors To TB Champions: Stories From Bihar, REACH, India 2019.**

The publication of this document is made possible by the support of the American People through the United States Agency for International Development (USAID). The contents of this document are the sole responsibility of REACH and do not necessarily reflect the views of USAID or the United States Government.

Acknowledgements

This book features ten TB survivors and Champions from Bihar, who first participated in a capacity-building workshop organised by REACH in December 2017. The workshop was in keeping with REACH's mandate to strengthen the community response to TB through the TB Call to Action Project supported by USAID.

The stories in this book were written in English by Milan George Jacob of REACH, based on video clippings and extensive conversations with the TB Champions, and edited by Anupama Srinivasan. Based on the English version, the stories were written in Hindi by Kumar Saurav, Ranchi-based journalist.

Dr Ramya Ananthakrishnan, Smrity Kumar, and Dr Pankaj Dhingra of REACH reviewed the book and provided substantial inputs. Bonnie Carlson of USAID/India reviewed an early draft of the English version and provided feedback and suggestions.

All photographs are by Milan George Jacob and Sumit Studio, Bihar. The book was designed by Mimansa Grafix, New Delhi.

We express our sincere gratitude to the TB Champions for sharing their stories with us and for allowing us to share them with the world. This book would not have been possible without the support of the Ministry of Health and Family Welfare, the Government of India; the Central TB Division; the Government of Bihar and the Bihar State TB Cell; and the team at the USAID/India Health Office. We also extend our gratitude to everyone who supported the Capacity-building Workshop in Bihar in December 2017.

मंगल पाण्डेय
मंत्री
स्वास्थ्य विभाग
बिहार, पटना

बिहार सरकार

पत्रांक 735(मं०)

दिनांक 12.10.2018

"शुभकामना संदेश"

यह जानकर अपार खुशी हो रही है कि टीबी जैसी गंभीर रोग से जंग जीत कर बचने वाले आज हमारे बीच जागरूकता के पर्याय बने हुए हैं। इन साहसी महिला और पुरुषों ने इस बीमारी से मिली पीड़ा को महसूस करते हुए समाज में टीबी के खिलाफ जागरूकता फैला कर समाज को नई दिशा दी है। टीबी अब लाइलाज बिमारी नहीं रहा। भारत में टीबी की रोकथाम के लिए राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर कई ठोस कदम उठाए गए हैं। भारत 2025 तक टीबी को देश से पूरी तरह खत्म करने को प्रतिबद्ध है।

भारत में टीबी की वार्षिक स्थिति रिपोर्ट-2018 के अनुसार बिहार में वर्ष 2017 में सार्वजनिक क्षेत्र से टीबी के 55,000 मामले अधिसूचित हुए। निजी क्षेत्र से 42,000 मामले अधिसूचित हुए। कुल मिला कर बिहार में कुल 97,000 टीबी के मामले आये। राज्य के स्वास्थ्य विभाग के द्वारा यह परिकल्पना की गयी है कि अन्य विभाग भी टीबी से बचाव की दिशा में एकीकृत होकर कार्य करें। हमने भारत सरकार की गाइडलाइन के अनुसार निजी दवा दुकानों को टीबी की अधिसूचना के लिए निर्देश दिया है। बिहार में लघु और माध्यम स्तर के उद्योगों के बीच टीबी के लिए उन्मुखीकरण और जागरूकता के कार्यक्रम कराने की दिशा में भी कार्य जोरों से चल रहा है।

टीबी विजेताओं की कहानियों का यह प्रकाशन सामाजिक बाधाओं, भ्रांतियों और मिथकों को दूर करने में सामाजिक स्तर पर एक सकरात्मक कदम है। जैसा कि माननीय प्रधानमंत्री ने सम्मेलन में कहा था कि इस रोग से बचनेवाले बदलाव के अग्रदूत हैं और समाज के स्तर पर उनकी आवाज किसी सलेब्रेटी से ज्यादा असरकारक होगी। बिहार सरकार टीबी से जंग में टीबी से बचनेवालों और विजेताओं के साथ खड़ी है।

असीम शुभकामनाओं के साथ

मंगल पाण्डेय
(मंगल पाण्डेय)

संजय कुमार, भा.प्र.से.
प्रधान सचिव
SANJAY KUMAR, I.A.S
Principal Secretary

बिहार सरकार
स्वास्थ्य विभाग
विकास भवन, पटना - 800 015
GOVERNMENT OF BIHAR
HEALTH DEPARTMENT
VIKASH BHAWAN, PATNA - 800015
Tel.: 0612-2215809 / Fax : 0612-2217608
E-mail : health-bih@nic.in

पत्रांक .... दिनांक ....

संदेश

मुझे बिहार के टी0बी0 से बचने वाले लोगों की कहानियों का संग्रह देखकर अपार खुशी हो रही है। टी0बी0 से लड़ाई में टी0बी0 से जंग जीतने वाले लोग सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। मैं उनकी दूसरे मरीजों की सहायता की प्रतिबद्धता और इच्छा से प्रेरित हूँ। मुझे यह जानकर भी खुशी है कि टी0बी0 विजेताओं ने मिलकर बिहार में एक समूह बनाया है जिसका नाम "टी0बी0 मुक्त वाहिनी" है। मैं आशा करता हूँ कि यह दिन-प्रतिदिन मजबूत होता जायेगा।

टी0बी0 से प्रभावित समुदाय के बीच से ही प्रतिक्रिया और प्रभावित समुदाय की भागीदारी पुनरीक्षित राष्ट्रीय टी0बी0 नियंत्रण कार्यक्रम (आर0एन0टी0सी0पी0) का मुख्य आधार है। टी0बी0 विजेताओं की सहभागिता और उनके अनुभव से इस कार्यक्रम को काफी फायदा होगा। इसी उद्येश्य से नेशनल टी0बी0 फोरम का गठन किया गया है, और यह काफी गर्व की बात है कि बिहार समूह के एक सदस्य को इस फोरम के लिए नामित किया गया है। राज्य के विभाग ने सामुदायिक जुड़ाव को अगले स्तर पर ले जाने की प्रक्रिया प्रारम्भ कर दी है। इसके लिए टी0बी0 विजेताओं की सहभागिता से जिला और ब्लॉक स्तर पर जागरूकता फैलाने के लिए काम शुरू किया गया है। हमें भारत से साल 2025 तक टी0बी0 को नष्ट करने के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सतत प्रयास करने होंगे, जैसा कि माननीय प्रधान मंत्री, श्री नरेन्द्र मोदी ने नयी दिल्ली में 13 मार्च, 2018 को टी0बी0 सम्मेलन में भारत को 2025 तक टी0बी0 मुक्त करने की घोषणा की है।

हमें टी0बी0 विजेताओं को राह दिखाना चाहिए। यह किताब उनके लिए काफी सहयोगी साबित होगी जब वे समुदाय में लोगों को इस रोग से जुड़े मिथ्य, भ्रांति, ईलाज, सहयोग और सेवा के बारे में जानकारी देंगे। चलिए हम टी0बी0 से जुड़ी भ्रांतियों और गलत धारणाओं को समझने का प्रयास करें और इस बीमारी को जड़ से खत्म करने में एक दूसरे का साथ दें।

1/1/2019
(संजय कुमार)
प्रधान सचिव, स्वास्थ्य विभाग।

संदेश

यह किताब दिसंबर 2017 में बिहार में रीच द्वारा टीबी से जंग जीत चुके लोगों के लिए आयोजित क्षमता विकास कार्यशाला से निकली कई सकारात्मक चीजों में से एक है। टीबी से जंग जीत चुके लोगों को एक मंच प्रदान करना और उन्हें अपने अनुभव साझा करने के लिए प्रेरित करना उनके आत्मविश्वास को जगाने के लिए काफी अहम था। उनकी कहानियां समाज के लोगों को टीबी के खिलाफ जंग के लिए प्रेरित करेंगी।

हमारे समाज के सहयोगी, सरकार और समुदाय के बीच की दूरी को पाटने में मदद करते हैं। टीबी से जंग जीत चुके लोगों के लिए हम अपने सहयोगियों को इस तरह के और क्षमता विकास कार्यशाला आयोजित करने के प्रति प्रोत्साहित करते हैं। राज्य को यह भी सुनिश्चत करना चाहिए कि इस तरह की कार्यशालाएं जमीनी स्तर पर आयोजित की जायें। हम बिहार में टीबी विजेताओं के समूह 'टीबी मुक्त वाहिनी' को मदद करना शुरू कर चुके हैं। साथ ही सभी जिला टीबी अधिकारियों को टीबी विजेताओं को जोड़ने के लिए पत्र लिखा जा चुका है। मौजूदा समय में राज्य में 38 जिला टीबी केंद्र , 538 टीबी यूनिट, 736 माइक्रस्कपी सेंटर, 70 सीबीनैट, 6 दवा प्रतिरोधी टीबी सेंटर और दो टीबी प्रदर्शन और ट्रेनिंग सेंटर के माध्यम से इलाज किया जा रहा है। वर्ष 2025 तक टीबी को नष्ट करने के लक्ष्य के आलोक में राज्य अपने सहयोगियों, निजी क्षेत्र, दवा दुकानों और उद्योगों के सहयोग से जागरूकता बढ़ाने और अधिसूचना में बढ़ोतरी के लिए काम कर रहा है। मीडिया को टीबी के सटीक कवरेज के लिए प्रेरित किया गया है। कई चुने गये प्रतिनिधि भी टीबी मुक्त ब्लॉक और विधानसभा क्षेत्र की दिशा में काम कर रहे हैं। टीबी विजेताओं के अनुभवों और कई जिम्मेदार संस्थाओं के संयुक्त प्रयास से टीबी मुक्त बिहार के सपने को सच करने का प्रयास करें।

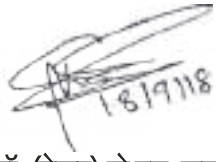

डॉ. (मेजर) के.एन. सहाय
राज्य टीबी कार्यक्रम अधिकारी
स्वास्थ्य और परिवार कल्याण विभाग
बिहार सरकार

Message From USAID

USAID has partnered with India's National TB Program for over 20 years to improve TB case detection, treatment, and access to care. Together, USAID and India have made some promising advances in our shared goals during this time.

We have harnessed technology, innovation, and best practices from around the world to respond to challenges in India. We have achieved a nationwide expansion of a revised national TB control program that has resulted in the implementation of uniform guidelines for the diagnosis and treatment of TB. We have established a pan-India drug supply system to get medication where it is needed quickly, including provision of new drugs like Bedaquiline and Delamanid, being introduced only now, that expand our ability to combat multi-drug resistant TB (MDR-TB) effectively. We have assisted in the nationwide rollout of the MDR-TB management program that has resulted in improved, free diagnosis and treatment of MDR-TB. We have supported the introduction of new technologies like GeneXpert and a new rapid test to achieve an earlier and accurate TB diagnosis.

It would be easy to be satisfied with what science, technology, and innovation can do to combat TB in India because of the successes we have achieved, and will continue to, as a result of these approaches. However, we are also committed to the people who have fought this disease and the lessons they can teach us about patient care, fighting stigma, how best to encourage others to seek early diagnosis, to access affordable, quality care, to complete their treatment, and to understand how best to not spread the disease. People can provide a support community for one another at a time when they may feel their most isolated and fearful. People can help end misinformation in communities that stand between diagnosis and cure. People can teach us how best to provide respectful care.

USAID has partnered with REACH since 2016 to develop state-wide networks of TB Champions -- those who have had TB and are now willing to give back to their communities, serve as role models, and tell their stories, some of which you will read in this publication, which features TB Champions from across the state of Bihar. The powerful stories shared by TB Champions can shape policy and practice, can provide support and encouragement, can fight stigma, and can bring us closer to our shared goal of achieving a TB-Free India.

Xerses Sidhwa
Director, Health Office
USAID/India

प्रस्तावना

वर्ष 1999 से रीच (रिसोर्स ग्रुप फॉर एजुकेशन एंड एडवोकेसी फॉर कम्युनिटी हेल्थ) क्षयरोग (टीबी) से जंग लड़ रहा है। वह रोगियों के इलाज, सेवा और उनकी मदद के माध्यम से इस बीमारी से लड़ रहा है। साथ ही शोध, ऐड्वकसी, लोगों के बीच जागरूकता और संवाद पर भी कार्य कर रहा है। 'द टीबी कॉल टू एक्शन' प्रोजेक्ट यू.एस. एजेंसी फॉर इंटरनेशनल डेवलपमेंट (यूएसएड) द्वारा सर्मिथत है। इसने हमें ऐडवकसीमें मजबूती प्रदान की है साथ ही हमारे काम को बिहार, झारखंड, ओड़िसा, असम, छत्तीसगढ़ और उत्तर प्रदेश में फैलाने में मदद की है।

भारत में टीबी के क्षेत्र में सबसे आधारभूत और प्रायः उपेक्षित पहलू टीबी से जंग जीत चुके लोग और प्रभावित समुदाय हैं। हमारा यह विश्वास है कि टीबी से जंग जीत चुके लोग मरीजों की तकलीफ, उनका संघर्ष, उनके परिजनों की परेशानी को सबसे बेहतर तरीके से समझ सकते हैं। इसलिए वे स्वास्थ्य सुविधा की व्यवस्था में पूरक बन कर महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। एक मेंटरशिप कार्यक्रम के द्वारा हम टीबी विजेताओं को एक बेहतर एडवोकेट बनाने के लिए पूरी तरह से सर्मिपत हैं। जिनकी भूमिका नीति की एडवोकेसी, कार्यक्रम को लागू करना, सामुदायिक निगरानी और मिथ्या या भ्रांति को दूर करने में होगी।

इस योजना के पहले कदम के तौर पर रीच ने बिहार के पटना में दिसंबर 2017 में विभिन्न जिलों के टीबी से जंग जीत चुके लोगों के लिए एक तीन दिवसीय आवासीय क्षमता विकास कार्यशाला का आयोजन किया। कार्यशाला में भाग लेनेवालों का चयन राज्य टीबी सेल, सिविल ससाइअटी / एनजीओ और अन्य संस्थाओं के साथ विमर्श करके किया गया था। कार्यशाला में भाग लेने के लिए 50 आवेदकों में से टीबी से जंग जीत चुके 15 लोगों का चयन किया गया। इनका चयन एक पैनल के द्वारा औपचारिक साक्षात्कार के बाद किया गया। कार्यशाला के सत्र का निर्धारण इस प्रकार किया गया था, जिसमें ज्यादा से ज्यादा समावेशी और भागीदारी हो और जिसमें दोतरफा सीखने की प्रक्रिया हो सके। तीसरे दिन की समाप्ति तक प्रतिभागी रीच द्वारा तैयार किये गये ढांचे पर अपने स्तर से खुद के लिए ऐड्वकसी की योजना बना पाने में सक्षम थे। कार्यशाला की समाप्ति पर प्रतिभागियों ने बिहार के लिए एक नेटवर्क तैयार किया, जिसका नाम रखा – टीबी मुक्त वाहिनी। समापन सत्र में टीबी से जंग जीत चुके लोगों ने औपचारिक रूप से इसका ऐलान किया। जनवरी और फरवरी 2018 में एक बार फिर से बैठकें हुईं जिसमें कई मुद्दों पर विचार–विमर्श किया गया।

टीबी से जंग जीत चुके लोगों जिन्हें हम टीबी विजेताओं कहना चाहते हैं, को इस कार्यशाला ने एक मंच प्रदान किया जहां वे एक दूसरे की कहानी साझा कर अपने ऐड्वकसी के लक्ष्य निधार्रित कर सकते थे। टीबी को अपने गांव, अपनी नगरपालिकाओं से खत्म करने की प्रक्रिया शुरू करने के उत्साह और इच्छा को देखते हुए उनकी कहानियों के संकलन की अवधारणा बनी। ये कहानियां उनकी कठिनाइयों का ब्योरा पेश करती हैं, पर सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि वे अपना भविष्य एक टीबी एडवोकेट के रूप में देख रहे हैं। पाठकों तक उनके अनुभवों और दूरदर्शिता को पहुंचाने का हमारा उद्देश्य यह बताना है कि टीबी हमेशा गरीबी और लाचारी की कहानी नहीं है।

Nalini Krishnan

डॉ. नलिनी कृष्णन
निदेशक, रीच

प्रष्ठभूमि

क्षयरोग (टीबी) का इतिहास 15000 वर्षों पुराना है और 21वीं सदी में भी यह मानव सभ्यता को परेशान कर रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) के अनुसार विश्व भर में एकल संक्रमण के कारण टीबी से सबसे ज्यादा मौतें होती हैं। डब्ल्यूएचओ के आंकड़े यह बताते हैं कि एक अनुमान के तहत वर्ष 2016 में 1 करोड़ 4 लाख लोग टीबी से संक्रमित हुए और एक अनुमान के मुताबित 17 लाख लोगों की इस बीमारी से मौत हो गयी। विश्व में कुल जितने टीबी के रोगी हैं उनका एक चौथाई हिस्सा भारत में है। अनुमानितः 28 लाख–किसी भी देश से ज्यादा। साथ ही साथ करीब दस लाख की संख्या ऐसे मरीजों की है जो कहीं भी रजिस्टर नहीं हुए हैं या जिनके बारे में कोई आंकड़ा नहीं है–जो या तो अधिसूचित नहीं हुए हैं या उनकी बीमारी की पहचान ही नहीं हुई है। वैश्विक स्तर पर जारी ग्लोबल टीबी रिपोर्ट 2017 के अनुसार वर्ष 2016 में भारत में बहु दवा रोधी (एमडीआर) टीबी के एक लाख चालीस हजार मरीजों के होने का अनुमान है, जो पूरे विश्व में सबसे ज्यादा है। टीबी को खत्म करने में भारत की एक महत्वपूर्ण भूमिका है। भारत सरकार ने वर्ष 2025 तक टीबी को ख़त्म करने का संकल्प लिया है। यह बहुत आवश्यक है कि टीबी के खिलाफ जंग में समाज को साथ जोड़ा जाये लेकिन टीबी पर कहानियां कभी–कभी ही विजय और आशावादिता की आती हैं। इस किताब में जिसमें 10 ऐसे टीबी विजेताओं की कहानियां हैं जो उनकी लगन का चित्रण करती हैं, उनकी दृढ़ता को बयां करती हैं और इस बीमारी से प्रभावित अन्य व्यक्तियों में सकारात्मकता एवं आशा का संचार करती है.

पटना में रीच द्वारा दिसंबर 2017 आयोजित क्षमता विकास कार्यशाला ने टीबी से जंग जीत चुके लोगों को अपने अनुभव साझा करने और एक दूसरे से सामंजस्य बनाने का एक मंच प्रदान किया। कार्यशाला और उसके बाद हुई बैठकों से टीबी से जंग जीत चुके लोगों का एक नेटवर्क बन गया जो अब बिहार में जागरूकता फैला रहा है. .

टीबी से जंग जीत चुके और ऐडवकसी से जुड़े सुदेश्वर सिंह ने कहा, 'जिसने इस बीमारी को सहा है सिर्फ वही बता सकता है कि मरीज को किन–किन परिस्थितियों से गुजरना पड़ता है। इस तरह के माहौल में यह जरूरी है कि टीबी से जंग जीत चुके लोगों का एक समूह विकसित किया जाये जो जागरूकता फैलाने में मदद करे और उन मरीजों को उनके दिल की बात रखने का एक मंच प्रदान करे।' सुदेश्वर सिंह ने नयी दिल्ली में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की अध्यक्षता में आयोजित एंड–टीबी सम्मेलन 2018 के आरंभिक सत्र में अपनी बात रखी थी।

समस्तीपुर के ग्रामीण इलाकों में इलाज करने वाले सत्येंद्रनाथ झा ने कहा 'उन लोगों से मिलना जो उनके समान ही अनुभव से गुजरे हों एक नयी ऊर्जा प्रदान करता है। मैंने यह सोचा था कि जब मैं स्वस्थ हो जाउंगा तो मुझे बहुत सीमित जीवन गुजारना होगा, पर जब कार्यशाला में टीबी से जंग जीत चुके दूसरे लोगों से मैं मिला, तो मुझे इस बात की प्रेरणा मिली कि मैं अपने सामान्य जीवन में लौट जाउं। मैंने यह महसूस किया कि मुझे अपने समुदाय से वह सारी बातें कहनी चाहिए जो मैं जानता हूं और उनकी मदद कर सकूं जो भी मैं कर सकता हूं।

सुदेश्वर और सत्येंद्र के जैसे अन्य लोग भी टीबी के साथ हुई उनकी जंग के बारे में बताते हैं साथ ही यह भी बताते हैं कि उसके बाद उनकी जिंदगी कैसे बदल गयी। इस संकलन में जो कहानियां हैं उनमें इस बात की भी झलक मिलती है कि इलाज के दौरान मरीजों के सामाजिक, आर्थिक कारक कैसे प्रभाव डालते हैं। हमें यह उम्मीद है कि इस प्रकाशन के माध्यम से टीबी की दुनिया की तरफ ध्यान आर्किषत करा पायेंगे। साथ ही साथ ये टीबी विजेता दूसरे मरीजों को यह भी यकीन दिलाना चाहते हैं कि ''सब ठीक हो जायेगा''।
अब वक्त है कि उन्हें सुना जाये!

अभिषेक कुमार

27 वर्ष, उद्यमी

अदलपुर गांव, हाजीपुर ब्लॉक, वैशाली जिला

टीबी से जंग जीत, फैला रहे जागरूकता

अभिषेक की उम्र 27 साल है, दुबली पतली काया और बिना दाढ़ी–मूंछ के चेहरे से उसकी उम्र का पता नहीं चलता। कई बार वह खोया–खोया सा दिखता है पर उसका एक जोशीला पक्ष भी है। वह एक उद्यमी है जो अपने पिता के साथ गांव में मोबाइल और ऑनलाइन ट्रैवल बुकिंग का काम करता है।

साल 2014 से पहले अभिषेक की जिंदगी बिल्कुल मजे से कट रही थी। बेंगलुरू में एक बैंक्वेट सेल्स प्रबंधकर्ता के रूप में काम कर वह खुश था। अपनी जिंदगी के सपनों को पूरा करने की कोशिश कर रहा था। लेकिन तभी उसे एक झटका लगा। एक नियमिति चेक–अप के दौरान छाती के एक्स–रे से उसे फेफड़ों में संक्रमण और टीबी होने की पुष्टि हुई। उसके पैरों तले की जमीन खिसक गयी। अपने सपनों को वहीं अधूरा छोड़ कर वह अपने घर लौट आया टीबी से जंग लड़ने को। उसने एक प्राइवेट डॉक्टर से इलाज कराना शुरू किया जिसने उसे टी. बी. की दवाइयां दीं।

उस इलाज से कोई खास फायदा नहीं हुआ। उसे लगातार खांसी और बुखार रहता था। तब जनवरी 2015 में अभिषेक हाजीपुर के सरकारी अस्पताल में इलाज के लिए पहुंचा। फरवरी में उसने पटना के एक डॉक्टर से परामर्श लिया। डॉक्टर ने एचआइवी और टीबी की दोबारा जांच कराने को कहा। अभिषेक के बलगम की जांच रिपोर्ट सकारात्मक थी। हालांकि जांच रिपोर्ट से इस बात के संकेत नहीं मिले थे कि उसे बहु–दवा प्रतिरोधी (एमडीआर) टीबी है, पर डॉक्टर ने उसे एमडीआर की दवा शुरू करने को कहा। अभिषेक ने कहा, ''दवा शुरू करने के एक–दो दिन बाद से ही मेरे दिल की धड़कन असामान्य रूप से बढ़ गयी, मैं सो भी नहीं पा रहा था।''

जांच और इलाज की उलझन

जब अभिषेक की परेशानी और बढ़ी तब उसने दिल्ली के एक बड़े हस्पताल के डॉक्टरों से परामर्श लेने की सोची। यहां जब डॉक्टरों ने अभिषेक की केस स्टडी की तो उन्होंने कहा कि बिना आवश्यक जांच के एमडीआर दवा शुरू करना एक बहुत बड़ी भूल थी। जब अभिषेक का इस हस्पताल में फिर से परीक्षण हुआ तो उसमें एमडीआर नहीं पाया गया। डॉक्टरों ने उसे श्रेणी 2 की दवा लेने को कहा। उसके बाद उसने हाजीपुर के डॉट्स केंद्र भेजा गया, जहां से उसने तीन महीने की दवाई ली।

दवा खाने से उसे कोई खास राहत महसूस नहीं हुई। पुरानी खांसी और बुखार उसे परेशान करता रहा। अभिषेक ने जून 2015 में फिर से हाजीपुर के सरकारी अस्पताल के डॉक्टरों से परामर्श लिया। जांच में उसे एमडीआर निकला। डॉक्टरों ने उसे एमडीआर की दवा दी, जो 27 महीनों तक चली। अब तक अभिषेक कुल 37 महीने से घर पर ही थे। कामकाज सब छूट चुका था, दोस्तों–रिश्तेदारों से मिलना–जुलना भी बंद था। वह घर में रहते–रहते बिल्कुल ऊब चुका था। इससे पहले वह कभी घर पर इतने लंबे समय तक नहीं रहा था। उसने बताया कि पिछले 8–10 सालों से वह घर से दूर ही रहता था।

दुष्प्रभाव नजरअंदाज किये गये

एमडीआर दवाओं का अभिषेक पर कुछ दुष्प्रभाव भी पड़ा। दवा लेने के पांच महीने के बाद उसे दुष्प्रभाव महसूस होने लगा। अभिषेक ने कहा कि वह अपनी मानसिक स्थिति के कारण अपने दोस्तों और परिवार के सदस्यों के साथ सामान्य रूप से बातचीत नहीं कर पा रहा था। दिसंबर 2015 की बात है अभिषेक से मिलने कुछ दोस्त और मेहमान मिलने आये। अभिषेक की मानसिक हालत ऐसी थी कि उसने उनसे बुरा बर्ताव किया, यहां तक कि एक दोस्त को मारने पर उतारू हो गया। इस घटना के बाद परिवारवालों ने अभिषेक को कमरे में बंद कर दिया। समस्या धीरे–धीरे बढ़ने लगी। जनवरी 2016 में अभिषेक ने आत्महत्या करने की कोशिश की। अभिषेक ने बताया कि उसकी मां ने उसे ऐसा करते देख लिया और जोर–जोर से रोने लगी। उसकी आवाज सुन कर घर के लोग भागते हुए आये और उसे बचाया गया। इसके बाद उसे फिर डॉक्टर को दिखाया गया जिन्होंने उसे दवाओं के दुष्प्रभावों से सामना करने में मदद की वहां उसे नयी दवा दी गयी जिससे उसकी मानसिक स्थिति में सुधार देखने को मिला।

जल्द पहचान से सही और सस्ता इलाज

टीबी से जुड़े अनुभवों के आधार पर अभिषेक का मानना है कि इस रोग की सही पहचान में ही काफी समय लग जाता है जिससे इसकी जटिलता और बढ़ जाती है। जिस वक्त मेरा इलाज चलता था उस वक्त नए रोगी को श्रेणी 1 की दवा दी जाती थी। लाभ नहीं होने पर श्रेणी 2 की दवा चलायी जाती थी। जब वह भी बेअसर साबित होती तो एमडीआर की जांच की जाती थी. यह भी हो सकता है के मरीज को पहले से एम् डी आर टी बी हो और उसकी समय से जांच हो जाय इससे अनावश्यक खर्च नहीं होगा और समय भी कम लगेगा।

टीबी के मरीजों को अभिषेक की सलाह

टीबी के रोगियों को अभिषेक ने सलाह देते हुए कहा, वे धैर्य न खोयें। दवाओं के दुष्प्रभाव से कुछ कठिनाइयां आ सकती हैं, पर इन दवाओं से बीमारी निश्चित तौर पर दूर हो जायेगी। आसपास मौजूद लोगों की नकारात्मक बातों पर बिल्कुल ध्यान नहीं दें। इस बीमारी के बारे में उसने इंटरनेट पर काफी खोजबीन की, पर ज्यादातर जानकारियां भ्रामक निकलीं। यह संभव है कि लोग गुमराह हो सकते हैं। इसलिए टीबी के विशेषज्ञों पर ही भरोसा रखें।''

आज टीबी से जंग जीत कर अभिषेक इस रोग के परामर्शदाता हैं। उन्होंने अपने निवास के आस पास के स्वस्थ्य केंद्रों में टीबी से जुड़े अपने अनुभवों और जानकारी को साझा करने का प्रण ले रखा है। वह लोगों के बीच जागरूकता फैला कर इस बीमारी से लड़ने में सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं। इतना ही नहीं रोगियों को पर्याप्त पोषण उपलब्ध कराने के लिए वह टीबी से जंग जीत चुके लोगों के साथ मिल कर एक पोषण बैंक भी शुरू करनेवाले हैं।

आरती कुमारी
26 वर्ष, शिक्षिका

जगन्नाथ प्रसाद
35 वर्ष, कृषि–विशेषज्ञ
मुजफ्फरपुर

अपनों ने किया बहिष्कार, एक दूसरे का बने सहारा

जगन्नाथ और आरती की जोड़ी एक संकोची पति और मुखर व बहादुर पत्नी की है। टीबी से जंग जीतने के बाद अब वे अपने पांच साल की बेटी अंतरा भारती और चार साल के बेटे वैभव की परवरिश में जुटे हैं। जगन्नाथ और आरती की जोड़ी समाज के लिए एक मिसाल है। पति–पत्नी की यह जोड़ी टीबी के खिलाफ संघर्ष की एक ऐसी दास्तान है जो हर टीबी मरीज के लिए प्रेरक हो सकती है।

सही इलाज नहीं मिला

जगन्नाथ को जून 2011 में क्षयरोग (टीबी) का पता चला। उस समय मेघालय में काम करते थे। बीमारी के कारण उन्हें मुजफ्फरपुर लौटना पड़ा। कुछ महीनों बाद जगन्नाथ का स्वास्थ्य काफी बिगड़ने लगा। डॉक्टर ने उनके भाई को बताया कि शायद यह एमडीआर टीबी हो।

जांच की सुविधा नहीं, परिवार का बहिष्कार

जगन्नाथ के नमूने को जांच के लिए रांची भेजा गया, क्योंकि पटना में उस वक्त एमडीआर परीक्षण की सुविधा नहीं थी। एक हफ्ते में ही इस बात की पुष्टि हो गयी कि जगन्नाथ को एमडीआर टीबी है। जगन्नाथ पटना में ही रुके और उनके भाई ने हर संभव मदद की। भाई और पत्नी को छोड़ कर सभी ने जगन्नाथ का एक तरह से बहिष्कार कर दिया था। परिवार के सदस्यों की बाद तो छोड़ दें, यहां तक कि उनके माता–पिता भी मिलने नहीं आते थे। जगन्नाथ की घुटन देख दूसरे रोगी यह पूछते कि क्या आपका कोई रिश्तेदार नहीं? यह सुनकर जगन्नाथ रो उठते. आरती ने भीगी आँखों से बताया कि जगान्नाथ इसी दौरान बेटी के पिता बने।

सुनने पड़े ताने

आरती के अनुभव भी कम कड़वे नहीं हैं। ससुराल में कदम रखते ही उन पर तानों और मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा। शादी के कुछ ही दिनों बाद उन्हें पता चला कि उनके पति को टीबी है। जांच के परिणाम उसी वक्त आये थे। फिर क्या था घरवालों ने टीबी होने के लिए आरती को ही दोषी ठहराया। यहां तक कि उन्हें यह भी कहा गया कि उनके साथ बदकिस्मती भी आयी है जिससे जगन्नाथ बीमार रहने लगे हैं। सास ने घर छोड़ कर जाने तक के लिए कह दिया।

पैसों की तंगी

आरती को उस वक्त टीबी के बारे में ज्यादा जानकारी नहीं थी। अपने अनुभव बताते हुए आरती का चेहरा गुस्से से लाल हो जाता है। जगन्नाथ जब दवा लेते थे, तो उस वक्त उनकी स्थिति काफी कष्टप्रद हो जाती थी। ऐसी अवस्था में उनकी देखभाल करने पर घर के लोग टकटकी लगाये देखते रहते थे। आरती को काफी भय महसूस होता था। वह अक्सर सोचा करती थी कि उसकी किस्मत इतनी खराब कैसे हो गयी?

हर तरफ से लोगों के तानों को सुन–सुन कर आरती काफी परेशान हो गयी थी। वह गर्भवती भी थी और उसे अपने पति की सेवा भी करनी थी। ससुरालवालों की परेशानियां अलग से। जगन्नाथ पर दवाओं का कोई असर नहीं हो रहा था। पैसों की भी तंगी थी। आरती एक निजी स्कूल में पढ़ा रही थी जिससे मिलनेवाला रुपया दवाओं पर ही खर्च हो जाता था।

पोषक आहार की कमी

जगन्नाथ को पोषक आहार की जरूरत थी, जो घरवाले नहीं समझते थे। जगन्नाथ जो खाते वह उल्टी हो जाता था। आरती बताती हैं कि उन्हें जगन्नाथ के खान–पान पर विशेष ध्यान देना था। उन्हें मांस के लिए अपनी सास के सामने गिड़गिड़ाना पड़ता था। उन्होंने बार–बार कहा कि यदि मांस नियमिति संभव नहीं है तो कम से कम 15 दिन में एक बार इसकी व्यवस्था कर दें। जब भी मांस पकता था, तो उसमें सभी की हिस्सेदारी होती थी। इस कारण जगन्नाथ को भरपूर आहार और पोषण नहीं मिल पाता था।

घबराहट और डर

जून 2012 को हालत और खराब हो गयी। उनकी बेटी सिर्फ छह दिन की थी और जगन्नाथ की खून की उल्टियां बंद ही नहीं हो रही थीं। आरती काफी घबरा गयीं। आरती के पिता को जब मालूम हुआ तो उन्होंने भी घर छोड़ने की सलाह दी, पर पढ़ी–लिखी होने के नाते वह इस बीमारी के बारे में जानना चाहती थीं। आरती ने सोचा कि तलाक लेना समस्या का समाधान नहीं है। पर जब जगन्नाथ धीरे–धीरे बहुत कमजोर हो गये तो आरती के मन में भी घबराहट होने लगी। उन्हें विधवा होने का डर सताने लगा, पर यह बात उन्होंने किसी से भी साझा नहीं की।

लोगों ने बनायी दूरी

स्वस्थ और शांति प्रिय होने के बावजूद उनमें आंखों के सामने घट रही घटनाओं का सामना करने की हिम्मत नहीं थी। आरती ने कहा, ''परिवार के सदस्य उस प्लेट को पैर से ठोकर मार कर दूर कर देते थे, जिसमें जगन्नाथ खाना खाते थे। बाहर कहीं बैठते समय जगन्नाथ को चेहरे को ढंक कर रखना होता था। लोग उनसे दूरी बना कर बैठते थे।''

ससुरालवाले रखने को तैयार नहीं थे

आरती मां बनने की बात को लेकर बेहद उत्साहित थी और बेटी के जन्म के बाद उसे बेहद प्रसन्नता हुई। वह उस समय दूसरा बच्चा नहीं चाहती थी, क्योंकि वह अपनी बेटी पर पूरा ध्यान देना चाहती थी। बेटे का जन्म नहीं होने के कारण उनके ससुरालवाले नाराज थे। बात यहां तक पहुंच गयी कि उनके ससुरालवाले उन्हें अपने साथ रखने के लिए भी तैयार नहीं थे। वे किसी भी मामले में उनका साथ देने के लिए तैयार नहीं थे, खास कर इसलिए क्योंकि जगन्नाथ काम करने में असमर्थ थे। आरती के पास कोई चारा नहीं था। उन्होंने जगन्नाथ के परिवार के साथ रहना जारी रखा।

दूसरी बार मां बनने पर बिगड़ी हालत

घरवाले हमेशा आरती को इन सबके लिए दोष देते। जब भी मेडिकल रिपोर्ट सकारात्मक आती तो आरती को और ज्यादा ताने सुनने पड़ते थे। यह सिलसिला लगातार चलता रहा। इस बीच आरती दूसरी बार मां बन गयी। उस समय उनकी हालत काफी बिगड़ गयी थी। प्रसव के एक महीने बाद, आरती को तेज बुखार और खांसी की शिकायत होने लगी और उसे बात करने में भी कठिनाई होने लगी। वह बोल भी नहीं सकती थी और दिन–रात बेचैन रहने के कारण वह ठीक से सो भी नहीं पाती थी। उन्हें पेट में इतना भयंकर दर्द होता था कि कभी–कभी वह मर जाने की बात सोचती थी।

सही इलाज नहीं मिला

आरती ने पटना जाकर इसकी जांच कराने का फैसला किया। वहां डॉक्टर ने बताया के आरती को पति से संपर्क से यह बीमारी हुई है। आरती के मन में कुछ दुविधा थी। उन्हें नयी दवाइयां दी गयीं। कुछ महीने तक दवाई लेने के बाद भी कोई असर नहीं हुआ। और अब उल्टियों की निरंतरता बढ़ती जा रही थी।'' डॉक्टर ने उसे अपने दो माह के बेटे को स्तनपान नहीं कराने की सलाह दी। उनकी परेशानी को देखते हुए आरती के माता–पिता वैभव की देखभाल करने लगे।

अगले कुछ महीनों तक आरती ने बहुत से डॉक्टरों से परामर्श लिया जो बार बार आरती का उपचार या दवाएं बदलते रहते लकिन आरती को दवा के दुष्परिणाम कम नही हुए और स्वास्थ में सुधार नहीं हुआ.

आरती का भाई भी उसकी पूरी मदद कर रहा था। उसने अपने दोस्तों और दूसरे रिश्तेदारों से परीक्षण एवं दवाइयों के खर्च को पूरा करने के लिए उधार भी लिया था। आरती का भाई भी उसकी पूरी मदद कर रहा था। उसने अपने दोस्तों और दूसरे रिश्तेदारों से परीक्षण एवं दवाइयों के खर्च को पूरा करने के लिए उधार भी लिया था।

बच्चों को देख आता था उत्साह

आरती ने कहा, ''अपने बच्चों को देख कर मुझमें उत्साह का नया संचार होता था। मैं उनके लिए किसी भी तरह से ठीक होना और जीना चाहती थी।''

लोग घबरायें नहीं, सही इलाज करायें

आरती कहती हैं, ''दूसरे रोगी भी टीबी का पता लगने के बाद इसका उपचार अन्य बीमारियों की तरह करायें।'' आरती अपने भयावह अनुभवों को याद करते हुए कहती हैं, ''अगर आपको पता चलता है कि आपको टीबी है या आपको इसके लक्षण दिखाई देते हैं, तो आपको उचित सलाह के लिए सही लोगों के पास जाने की जरूरत है। यह आम बात है कि लोग आप पर लांछन लगायेंगे और आपके साथ भेदभाव करेंगे। लेकिन, आपको घबराना नहीं है। अगर लोग आपका मजाक उड़ायें तो उन्हें ऐसा करने दें।''

आरती और जगन्नाथ का कहना है कि, ''रोगी के परिवार की भूमिका भी बेहद अहम होती है। परिवार को यह सुनिश्चित करना है कि रोगी ने सही समय पर दवाएं लीं या नहीं। लोगों को अक्सर बीमारी के बारे में सही जानकारी नहीं होती है और उन्हें यह लग सकता है कि टीबी एक भयानक बीमारी है। यह परिवार की जिम्मेदारी है कि रोगी को पूरा समर्थन मिले। उसे बहिष्कृत नहीं किया जाये। आवश्यक समर्थन और देखभाल से रोगी के स्वास्थ्य में काफी जल्दी सुधार होगा।''

जगन्नाथ पंचायत स्तर पर टीबी से सम्बंधित अपना योगदान देने की योजना बना रहे हैं. वे ग्राम सरपंच एवं पंचायत के अन्य सदस्यों के सहयोग से टीबी के प्रति जागरूकता फैलाना चाहते हैं. आरती ग्राम वार्ड मेम्बर एवं सीडीओ के सहयोग से लोगों में टीबी के प्रति जागरूकता का प्रसार करना चाहती हैं. वे स्कूली बच्चों को टीबी की जानकारी देना चाहती हैं और अधिक से अधिक लोगों को बिहार के टीबी के नेटवर्क के बारे में जानकारी देना चाहती हैं।

हर नाउम्मीदी को उम्मीद में बदलने का नाम है पूनम

22 वर्षीय पूनम पटना में पारामेडिकल की पढ़ाई कर रही हैं। पूनम की मासूमियत और जिंदादिल स्वभाव बरबस सभी को आकर्षित करती है। पर इस जिंदादिली के पीछे छिपे संघर्ष और जिजीविषा कुछ अलग ही कहानी कहते हैं। पूनम ने अपनी इच्छाशक्ति और संघर्ष से टीबी को मात दे उन लाखों लोगों के सामने मिसाल रखी है जो हिम्मत हार जाते हैं या इलाज नहीं कराते हैं। पूनम के पिता छोटा–मोटा व्यापार करते हैं। पूनम के दो छोटे भाई और पूरे परिवार का खर्च उसी आमदनी से चलता है। पूनम की कहानी भारत में टीबी रोग की पहचान और इलाज की सुविधाओं की सच्चाई सामने लाती है। यह इस बात का प्रमाण है कि भारत में इस दिशा में किये जा रहे प्रयासों में सुधार की आवश्यकता हैं।

वर्ष 2014 में पूनम को पता चला कि उसे टीबी है। उसके एक साल बाद उसे पता चला कि उसे बहुड्रग प्रतिरोधी (एमडीआर) टीबी हो गया है। शुरू में उसे खांसी और बुखार जैसे लक्ष्ण भी नहीं थे। ग्यारहवीं कक्षा में पढ़ रही पूनम को पढ़ाई के लिए हर दिन जमुई जाना पड़ता था। जब वह शाम को लौटती तो उसे काफी थकान महसूस होती थी, वह सोचती कि कमजोरी की वजह से ऐसा हो रहा है। एक दिन अचानक खाना खाते समय उसे खांसी आयी और खांसी बंद ही नहीं हो रही थी। फिर उसे बलगम के साथ खून आया।

डॉक्टर रोग की पहचान नहीं कर सके

अपनी मां के साथ वह गांव के डॉक्टर के पास गयी, लेकिन डॉक्टर रोग की पहचान नहीं कर सका। जब दो–तीन दिनों तक बगलम से खून आना और खांसी बंद नहीं हुई तो वे लोग जमुई के एक डॉक्टर से परामर्श लेने गये। डॉक्टर ने एक्स–रे करा कर देखा। लेकिन बीमारी का पता नहीं चल सका। उस डॉक्टर ने कहा कि पूनम के गले में कोई जख्म हो गया है जिसकी वजह से खून आ रहा है। इसके बाद वहां कोई जांच नहीं की गयी।

वहां से लौटने के कुछ ही दिनों के बाद पूनम का स्वास्थ्य काफी बिगड़ने लगा। उसे पटना ले जाया गया, जहां पता चला कि उसे टीबी है। पूनम को जो दवाएं दी गयीं वो उसके लिए उपयुक्त साबित नहीं हुईं। पूनम को पूरे शरीर में खुजली महसूस होने लगी। डॉक्टर को दवाओं के दुष्प्रभावों के बारे में बताया गया, पर उसने दवा बदलने से इनकार कर दिया। पूनम की परेशानियां और बढ़ने लगीं। वह दवाएं खाली पेट लिया करती थी, जल्द ही उसे बार–बार उल्टियां होनी शुरू हो गयीं। पूनम ने कहा, ''हार कर उसके पास कोई चारा नहीं बचा, उसने दवाइयां लेनी बंद कर दीं।''

पूनम की स्थिति दिन पर दिन बिगड़ती जा रही थी। वह फिर से जमुई के डॉक्टर के पास गयी, उसने कहा कि उसे टीबी नहीं था। हालांकि, कुछ दिनों के बाद उसने बताया कि यह टीबी था। पूनम और उसके परिवारवालों के सामने सबसे बड़ी उलझन यह थी कि जांच परिणाम एक जैसे नहीं आ रहे थे। साथ ही साथ डॉक्टरों का परामर्श भी अलग–अलग था। कोई डॉक्टर कहता कि टीबी है कोई कहता टीबी नहीं है। इन सब बातों में काफी वक्त निकल गया।

मुफ्त उपचार का लाभ उठाया

पूनम की एक पड़ोसी ने उसे पटना के नालंदा मेडिकल कॉलेज हॉस्पिटल जाने का सुझाव दिया। पूनम को वहां ले जाया गया, जहां परीक्षण के बाद उसे एमडीआर–टीबी होने की पुष्टि हुई। गांव लौटने पर पूनम ने फिर से दवा लेनी शुरू कर दी। जब पूनम को टीबी होने का पता चला उस वक्त उसे इसकी गंभीरता का एहसास नहीं था। कई डॉक्टरों से परामर्श लेने के बाद उसे पता चला कि यह कितनी खतरनाक बीमारी है। पूनम ने कहा,'' कम से कम 10 डॉक्टरों की सलाह मैंने ली। उनमें से एक ने यहाँ तक भी कहा कि एमडीआर–टीबी से कैंसर भी हो सकता है।'' पूनम के मन में उपचार में होनेवाले खर्च की भी चिंता थी। उसके परिवार की आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं कि वह खर्च उठा सके। इलाज में हर महीने 15 हजार रुपये का खर्च होने का अनुमान था। उसके पिता को उसके भाइयों की पढ़ाई का भी खर्च उठाना पड़ता था। फिर उसे सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली के बारे में जानकारी मिली जहां से वह मुफ्त उपचार का लाभ उठा सकती थी। उसने उसी से इलाज कराना शुरू किया।

रिश्तेदारों ने बनायी दूरी, माता–पिता और भाई ने दिया साथ

पूनम के लिए सबसे निराशाजनक बात यह रही कि उसके रिश्तेदारों ने उससे दूरी बना ली। उसके चचेरे भाई–बहन भी उससे दूर रहने लगे। रिश्तेदार तो यहां तक कहते थे कि अब इलाज कराने और दवा लेने से कोई फायदा नहीं होगा। अब उसके लिए मरना ही बेहतर होगा। इन बातों से पूनम काफी परेशान हो गयी। लेकिन उसके माता–पिता और भाई ने उसका साथ नहीं छोड़ा। उसका पूरा साथ दिया। उन्होंने कभी यह महसूस नहीं होने दिया कि उन्हें कोई बीमारी है। उसके पिता उसे हमेशा दिलासा देते कि हालत इतनी खराब नहीं है जितनी लोग कह रहे हैं। वह उसे लेकर पटना भी गये और आसपास के इलाकों की सैर भी करायी।

दोस्तों और मंगेतर ने भी रखा ख्याल

टीबी से जंग लड़ने में एक सबसे महत्वपूर्ण पक्ष यह रहा कि उसके दोस्तों ने उसका भरपूर साथ दिया और हमेशा प्यार और स्नेह दिया। यहां तक कि वे इस बात का ख्याल भी रखते थे कि पूनम ने दवा खायी या नहीं। पूनम ने बताया,''मेरे मंगेतर ने भी मेरी एक बच्चे की तरह देखभाल की थी। मुश्किल के समय ही मुझे यह पता चला कि जरूरत के वक्त कौन काम आयेगा।''

दूसरों से उम्मीद न करें, खुद पर भरोसा करें

पूनम पिछले तीन सालों के अपने अनुभवों के बारे में बात करते हुए कहती हैं, ''मैंने सीखा है कि किसी को दूसरों से कभी कोई उम्मीद नहीं करनी चाहिए और हमेशा अपने आप पर दृढ़ता से विश्वास रखना चाहिए।'' टीबी से जंग के दौरान सबसे महत्वपूर्ण पहलू पूनम का सकारात्मक रहना है। वह हमेशा खुद को समझाती रहती थी कि वह इस जंग को जीत लेंगी। उनके रिश्तेदारों को यह भरोसा नहीं था कि पूनम एक विजेता की तरह उभरेंगी, इसलिए उन्होंने दूरी बना ली थी। बीमारी के दौरान पूनम अपनी पढ़ाई पर ज्यादा ध्यान नहीं दे पायीं, लेकिन उन्होंने पढ़ाई भी जारी रखने का फैसला किया।

टीबी विजेता एकजुट होकर मरीजों को प्रोत्साहन दें

पूनम ने कहा,''मैं लोगों को बताना चाहती हूं कि बीमारी चाहे कुछ भी हो उन्हें रोगियों से कभी दूरी नहीं बनानी चाहिए। बीमार लोगों से मिलना–जुलना और उसमें आत्मविश्वास का संचार करना बेहद महत्वपूर्ण है। वह कहती हैं कि टीबी एक असाध्य रोग नहीं है। चेहरे पर सकारात्मक भाव के साथ वह कहती हैं कि रोगियों को नियमित रूप से दवाएं लेनी चाहिए। मुझे मालूम है कि उस समय कैसा महसूस होता है। इसलिए, चिंतित होने की जरूरत नहीं है क्योंकि कठिनाई के रास्ते पर चल कर ही जीत हासिल होती है। ऐसी स्थिति में अपने विचारों को सकारात्मक बनाये रखना बेहद जरूरी है।''

पूनम को लगता है कि टीबी पर विजय पाने वाले (टीबी सरवाईवर) सभी लोगों को सकारात्मक संदेश का प्रसार करने तथा रोगियों के मनोबल को प्रोत्साहन देने के लिए एकजुट होकर प्रयास करना चाहिए। वह कहती हैं कि रोगियों को इस बात पर भरोसा होना बेहद जरूरी है कि सब कुछ ठीक हो जायेगा।

राजीव कुमार
24 वर्ष, बीए स्नातक
सूरजगढा,
जिला–लखीसराय

मां–बहन की टीबी से मौत, अपने दम पर जीती लड़ाई

यह कहानी है एक ऐसे युवा कि है जो स्वभाव से चंचल और प्रफुल्लित है। जीवन में हर कदम सावधानीपूर्वक रखता है। राजनीति–विज्ञान से स्नातक करने के बाद स्कूल के बच्चों को पढ़ा कर अपना खर्च चलाता है। उसका नाम है राजीव। राजीव का जीवन एक ऐसे भंवरजाल से निकला है जिससे शायद बहुत कम लोग निकल पाते हैं। राजीव ने टीबी के कारण पहले अपनी मां और बहन को खोया और फिर खुद उसकी चपेट में आ गया। यह उसका दृढ़ निश्चय ही था कि वह उस मुसीबत से बाहर निकल पाया। पर इस पूरी कवायद में राजीव का बहुतों ने साथ छोड़ा और बहुतों ने साथ दिया भी। राजीव के पिता अब बूढ़े हो चले हैं। घर में कमानेवाला एकमात्र सदस्य उसका बड़ा भाई है। यूं तो राजीव की इच्छा थी कि वह आगे की पढ़ाई करे और अपने सपनों को परवाज दे, पर हालात उसे ऐसा करने की इजाजत नहीं दे रहे हैं। फिर भी वह अपने चेहरे पर मुस्कान लिये रहता है। अपनी सारी पीड़ा वह मुस्कान बिखेरते हुए ही बताता है।

मां का हो गया निधन

उसकी मां बीमार रहा करती थीं। उनके स्वास्थ्य की स्थिति के बारे में डॉक्टरों की राय एक समान नहीं थी। कुछ डॉक्टर कहते कि उन्हें टीबी है और कुछ उसे अन्य संक्रामक बीमारी बताते। यह कभी नहीं पता चल पाया कि उन्हें आखिर हुआ क्या था। राजीव मुंगेर के कॉलेज के छात्रावास में रहते थे जो सूरजगढ़ा से लगभग 50 कि.मी. दूर है। उस भयानक रात को याद करते हुए उनकी आंखें भर आती हैं जब उन्हें रात के लगभग 10 बजे फोन आया कि उनकी मां की हालत काफी खराब है। कोई साधन नहीं मिल पाने के कारण वह उस रात घर नहीं पहुंच सके। वह अगली सुबह अपने गांव पहुंचे। उन्होंने अपने खाते में रखे सारे पैसे इलाज पर खर्च कर दिये। लेकिन वह कुछ ही दिनों तक जीवित रह सकीं।

बहन का चल रहा था निजी इलाज

साल 2014 में राजीव को टीबी रोग होने का पता चला। उसी दौरान राजीव की बहन का निजी हस्पताल से टीबी का इलाज चल रहा था। उसकी बहन ने सरकार की ओर से उपलब्ध सुविधाओं से उपचार कराने पर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया। उसने सरकारी प्रदाता से एक–दो महीने तक दवाएं लीं, लेकिन उसे विश्वास ही नहीं था कि वह ठीक हो जायेगी। उसने राजीव के सुझाव पर भी ध्यान नहीं दिया। उसने करीब छह महीने निजी अस्पतालों से दवाएं लीं। एक बार राजीव अपनी बहन के ससुराल किसी धार्मिक अनुष्ठान में भाग लेने गया था। वहां उसे छाती में तेज दर्द होने लगा। उसे काफी परेशानी महसूस होने लगी। वह काफी घबरा गया। छात्रावास लौटने के बाद उसे फिर से सीने में दर्द होने लगा। शरीर कमजोर पड़ने लगा और लगातार खांसी रहने लगी।

दवा लेने पर भी नहीं हुआ सुधार

राजीव अपनी मां और बहन में टीबी के लक्षणों को देख चुका था, इसलिए उसने सोचा कि चाहे जो हो देखा जायेगा। जैसी आशंका थी, राजीव को टीबी होने का पता चला और उसने दवा लेनी शुरू कर दी। लेकिन नियमिति दवा लेने के बावजूद उसकी स्थिति में सुधार नहीं हुआ। इस बीच, उसके बलगम जांच के परिणाम सकारात्मक आये। वह यह सोच कर परेशान हो गया कि नियमिति रूप से दवा लेने के बावजूद उसकी स्थिति में सुधार क्यों नहीं हुआ।

दो जगहों की जांच से पता चला एमडीआर

राजीव को एमडीआर टीबी के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। उसने श्रेणी–2 की दवा लेनी शुरू की, लेकिन फिर भी बीमारी ठीक नहीं हो रही थी। उसने डॉक्टर से पूछा कि दवाएं असर क्यों नहीं कर रही हैं? डॉक्टर ने कहा कि वह नियमित दवाएं नहीं ले रहा है इस वजह से दवाएं असर नहीं कर रही हैं। डॉक्टर ने श्रेणी–2 की दवाएं एक महीने तक और लेने को कहा। इन सब चीजों से राजीव काफी उलझन में था। उसे समझ में ही नहीं आ रहा था कि वह क्या करे। अपनी इस दुविधा को दूर करने के लिए राजीव भागलपुर और लखीसराय गया। उसे उम्मीद थी कि दोनों जगहों के परीक्षण पूरी तरह से मेल खायेंगे और स्थिति पूरी तरह से स्पष्ट हो जायेगी। दोनों परीक्षणों में उसे एमडीआर–टीबी का पता चला। उसके बाद राजीव पटना आ गये।

नीम–हकीम के चक्कर में गयी बहन की जान

इधर उसकी बहन का विभिन्न निजी अस्पतालों में इलाज जारी रहा। उसका स्वास्थ्य लगातार बिगड़ता गया। एक रात राजीव को फोन आया कि उसकी बहन के बलगम से खून आ रहा है और उसकी हालत काफी नाजुक है। वह और उसके पिता दोनों बाइक से उसके घर पहुंचे। वहां वे दवाइयों के लिए नीम–हकीमों पर निर्भर थे। वहां से निकटम चिकित्सा सुविधा सूरजगढा में थी। उसे अगली सुबह वहां ले जाने का फैसला किया गया, पर उसी रात उसका निधन हो गया। यह साल 2015 की बात थी।

अपने बलबूते राजीव ने जीत हासिल की

राजीव को टीबी से पूरी तरह से ठीक होने में तीन साल लग गये। इसमें श्रेणी–1, श्रेणी–2 का इलाज भी शामिल है। राजीव के मन में यह बात थी कि उसके परिवार में उसकी मां और बहन की मौत टीबी से हो चुकी है तो वो कैसे बच पायेगा। लेकिन उसने सोचा कि कम से कम इससे लड़ाई की कोशिश जरूर करनी चाहिए। आज राजीव को इस बात की सबसे ज्यादा खुशी है कि उसने हार नहीं मानी, कोशिश की और उसे इस लड़ाई में जीत मिली। राजीव के साथ कोई नहीं था। उसने यह लड़ाई अपने बलबूते ही जीती थी। अब राजीव और उसके भाई मिल कर उसकी भांजी की देखभाल भी कर रहे थे। उसका पटना में टीबी का इलाज चल रहा है। एक रोगी के तौर पर प्राप्त अनुभवों के आधार पर वह परिस्थितियों को बेहतर ढंग से निपट सकते हैं।

हद तो यह हो गयी थी कि जब राजीव की बहन की मौत हुई तो सरकारी अस्पताल से कोई भी चिकित्साकर्मी उनकी भांजी की जांच करने नहीं आया था। उन लोगों ने सरकारी डॉक्टर को इस बात की जानकारी भी दी थी कि उनकी बहन की मौत टीबी से हुई है। डॉक्टर की ओर से कोई जवाब नहीं मिला।

गरीबों को होती हैं और भी ज्यादा समस्याएं

राजीव अब दूसरे रोगियों की मदद करना चाहते हैं। वह यह सुनिश्चित करना चाहते हैं कि किसी और को उन कठिन परिस्थितियों का सामना नहीं करना पड़े। राजीव सुझाव देते हैं, ''टीबी से संक्रमित गरीब लोगों को समस्याएं और भी ज्यादा होती हैं। उन्हें पोषण की सबसे ज्यादा मुश्किल होती है। सरकार को चाहिए कि इलाज के दौरान रोगियों की सुविधाओं का पूर्ण ध्यान रखा जाए।"

रामदयाल महतो
46, कैब ड्राइवर
फैजुल्लाहपुर, जिला
गोपालगंज

जागरुकता ने बचायी जान

रामदयाल एक सुलझे हुए इंसान हैं। हरे रंग के सूट, बेदाग सफेद शर्ट और जूतों में उनका व्यक्तित्व आकर्षक लगता है। रामदयाल के दो बच्चे हैं। दिल्ली में दो साल टैक्सी चलाने के बाद रामदयाल अपने गांव लौट आये। गांव में भी उन्होंने टैक्सी चलाना जारी रखा।

जनवरी 2012 में उन्हें क्षयरोग होने का पता चला। रामदयाल ने कहा कि उन्हें स्थानीय सार्वजनिक स्वास्थ्य केंद्र (पीएचसी) में लगे बैनरों और पोस्टरों से टीबी के बारे में जानकारी थी। जब उन्होंने अपने आप में वजन घटना, लगातार खांसी रहना और अत्यधिक पसीना निकलना जैसे लक्षणों को महसूस किया, तो उन्हें लगा कि उन्हें टीबी हो गया है। ये सारा कुछ 15 दिनों के अंदर हुआ। पीएचसी में उनकी जांच की गयी जिसके परिणाम से टीबी होने का पता चला।

रामदयाल ने तुरंत टीबी की दवाएं लेनी शुरू कर दीं। ये दवाएं उन्होंने डॉट्स प्रोवाइडर से लीं। उन्होंने समय पर दवाएं लीं और खानपान, पोषण के बारे में दिये गये निर्देशों का पूरी तरह से पालन किया। छहः महीने की दवाइओं के कोर्स के बाद जब इनकी एक बार फिर से जांच की गयी,तो उससे पता चला कि उन्हें अब टीबी नहीं है।

परिवार का भरपूर सहयोग मिला

रामदयाल ने अनुभवों को साझा करते हुए कहा, ''मुझे मेरे परिवार का पूरा सहयोग मिला, पर गांववालों ने मेरा तिरस्कार किया। मुझे लगा कि मेरा मर जाना बेहतर है। मेरे अधिकतर दोस्त भी उस वक्त मुझसे दूर रहते थे। सबसे ज्यादा दुख पहुंचानेवाली बात यह थी कि छोटे–छोटे बच्चे, जिन्हें टीबी के बारे में कुछ पता नहीं होगा, वे भी अपने माता–पिता के रवैये के कारण मुझसे दूर–दूर रहते थे। हालांकि उनका एक व्यापारी दोस्त उनके साथ हर दुख–दर्द में खड़ा रहा। वह रामदयाल को चेक–अप के लिए अस्पताल ले जाया करता था।'' इलाज के दौरान रामदयाल अपने लिए एक अलग थाली और ग्लास रखा करते थे क्योंकि उन्हें लगता था की कही वे दूसरों को टीबी तो नहीं फैला रहे, पर उनके परिवार वाले उन्हें आश्वस्त किया कि इसकी जरूरत नहीं ।

जागरुकता फैलाना ही लक्ष्य

रामदयाल ने कहा, ''मेरे परिवार का मुझे बिना किसी शर्त के समर्थन देना उस वक्त की सबसे सुखद याद है। दूसरी तरफ गांववालों का मेरे साथ किया गया व्यवहार सबसे ज्यादा तकलीफदेह था।''

रामदयाल अब टीबी एडवोकेट बनना चाहते हैं। वे लोगों में टीबी के बारे में जागरूकता फैलाना चाहते हैं। वह अपने ऐडवकसी के लक्ष्यों को हासिल करने के लिए योजना बना रहे हैं। उन्होंने कहा कि मैं ग्राम सभा की बैठक में टीबी के बारे में बताना चाहता हूं। ब्लॉक स्तर पर मैं जिला मजिस्ट्रेट और जिला अधिकारियों से मानव–संसाधन के मुद्दे पर बातचीत करना चाहता हूं। रामदयाल आंगनबाड़ी में पढ़नेवाले विद्यार्थियों के अभिभावकों और जिला स्तर के स्वयं सहायता समूहों के साथ भी जुड़ने की इच्छा रखते हैं।

डॉक्टर बनने का लक्ष्य

यह कहानी समस्तीपुर के सोनम की है। अपने जीवन के सबसे महत्वपूर्ण दौर में उसे टीबी से जंग लड़नी पड़ी। इस जंग में जीत हासिल कर उसने हाल ही में बारहवीं बोर्ड की परीक्षा दी है। उसने गणित और जीव विज्ञान के विषय लिये हैं। वह अपने मेडिकल प्रवेश परीक्षा के परिणाम का भी इंतजार कर रही है। सोनम इस बात के प्रति आश्वस्त हैं कि उनका मेडिकल की परीक्षा में चयन हो जायेगा, पर किसी कारणवश यदि ऐसा नहीं होता है तो वह दोबारा भी परीक्षा देंगी। ऐसे तो वह शर्मीली और कम बोलनेवाली हैं, पर गणित के प्रति अपनी रुचि के बारे में बड़े उत्साह से बताती हैं।

टीबी के बारे में जानती थीं

वर्ष 2016 में सोनम जब ग्यारहवीं कक्षा में थीं तो उस वक्त उन्हें टीबी हो गया। वह कहती हैं,'' मैं टीबी और टायफाईड जैसी बीमारियों के बारे में जानती थी, चुंकि मैं मेडिकल की पढ़ाई करना चाहती हूं इसलिए मैंने इनके बारे में पढ़ा था।'' उसे लगातार खांसी हो रही थी। वह एक निजी अस्पताल में गयी जहां डॉक्टर ने बुखार और गैस्ट्रिक के लिए दवाएं लिख दीं। जब वह ठीक नहीं हुई तो फिर से डॉक्टर के पास गयी। जांच के परिणाम से पता चला कि उसे टीबी है।

दवाओं के थे दुष्प्रभाव

सोनम कहती हैं, ''मैंने टीबी की दवाएं लेनी शुरू की, पर एक महीने में ही मुझे तेज बुखार रहने लगा। फिर मैंने सरकारी अस्पताल जाने का फैसला किया। मेरे बलगम जांच के परिणाम से भी टीबी की पुष्टि हुई।'' उसने टीबी की दवाएं डॉट्स प्रोवाइडर के माध्यम से लेनी शुरू की। इस बीच दो महीने में ही सोनम का वजन 15 किलोग्राम कम हो गया।

अपने सबसे बुरे समय के बारे में सोनम कहती हैं, ''दवाओं के दुष्प्रभाव बहुत अधिक थे। मुझे दुष्प्रभावों के कारण दो महीने में ही दवाएं बदलवानी पड़ीं। मुझे यह डर लगने लगा कि मैं ठीक नहीं भी हो सकती हूं। मेरी पढ़ाई पर असर पड़ रहा था और जल्द ही मुझे बोर्ड की परीक्षा में भी शामिल होना था।''

जब तीन महीनों के बाद उसके बलगम की जांच की गयी और एक्स–रे किया गया, तो उसके परिणाम से टीबी के ठीक होने के संकेत मिले। उसने दवाएं जारी रखीं और छह महीने तथा नौ महीने बाद फिर से जांच कराया। उस जांच में भी टीबी नहीं होने का पुष्टि हुई।

परिवार ने दिया साथ

सोनम ने कहा, ''मेरे इलाके में सबसे बड़ी चिंता की बात इस बीमारी के साथ कलंक का जुड़ा होना है। मैं अपने परिवार में सबसे छोटी हूं। मेरे माता–पिता, मेरे दो भाइयों और एक भाभी ने मेरा पूरा सहयोग किया। हमलोगों ने सामाजिक भ्रांति के कारण अपने रिश्तेदारों और गांव के दूसरे लोगों को इस बीमारी के बारे में पता नहीं चलने दिया।''

स्कूल से मिला सहयोग

सोनम के स्कूल प्रशासन ने उसे इलाज के लिए छुट्टी दे दी और उपस्थिति के मामले में भी रियायत दे दी। उसने कहा, ''जहां वह मेडिकल की परीक्षा के लिए कोचिंग करने जाती थी, वहां भी उसे भरपूर सहयोग मिला।'' हालांकि उसे छोटे बच्चों को ट्यूशन पढ़ाना छोड़ना पड़ा, क्योंकि उसका स्वास्थ्य इसकी इजाजत नहीं दे रहा था।

फैलाना चाहती हैं जागरुकता

सोनम अब टीबी ऐडवकसी में बढ़–चढ़ कर भाग लेना चाहती है। वह कहती है,''मैं ग्राम–सभा के सदस्यों के लिए हर महीने टीबी उन्मुखीकरण के लिए कार्यक्रम आयोजित करना चाहती हूं। मैं अपने स्कूल में भी टीबी के प्रति जागरुकता कार्यशाला आयोजित करना चाहूंगी जिससे रोग की जल्द पहचान में मदद मिल सके।'' सोनम आंगनबाड़ी और स्वास्थ्य कर्मियों के साथ मिल कर भी टीबी के प्रति जागरुकता फैलाने के लिए काम करना चाहती है।

सुधेश्वर सिंह
40 वर्ष, विकास सेक्टर में कार्यरत
पटना

हर रोज एक मरीज का मार्गदर्शन करने की चाह

आप सुधेश्वर से दस मिनट बात करें, खुद को उत्साहित महसूस करेंगे। टीबी को हराने के बाद सुधेश्वर ने यह कसम खायी है कि वह बाकी बची जिंदगी टीबी को खत्म करने में लगायेंगे। टीबी ऐडवकसी कार्यक्रमों के अलावा सुधेश्वर किसानों के समूहों के साथ काम करते हैं। वह जानकारी वाले, ऊर्जावान और योजना बना कर चलनेवाले इंसान हैं। सुधेश्वर को टीबी होने की पुष्टि साल 2010 में हुई जब वह एक गैर–सरकारी संस्था (एनजीओ) में काम करते थे, जो कम उम्र में विवाह रोकने की दिशा में काम करती थी। अत्यधिक पसीना आने और छाती में दर्द होने के साथ ही उनका वजन तेजी से घटा। कुछ ही हफ्तों में उनका वजन 84 किलोग्राम से 72 किलोग्राम हो गया।

पत्नी ने दिया संबल

सुधेश्वर ने बिना समय गंवाये एक डॉक्टर से मुलाकात की जिसने उन्हें एक्स–रे कराने को कहा। एक्स–रे से उनके फेफड़े में कुछ तरल पदार्थ होने का संकेत मिला। फेफड़े से तरल पदार्थ को निकाला गया, उसके बाद जांच रिपोर्ट से टीबी होने की पुष्टि हुई। सुधेश्वर पूरी तरह से घबरा गये और सोचने लगे कि अब क्या होगा? अपने छोटे से परिवार में वही कमानेवाले सदस्य थे। उनके परिवार में पत्नी और दो साल का बेटा है। उनकी पत्नी ने उन्हें बहुत संबल दिया और लगातार कहती रही कि सब कुछ अच्छा हो जायेगा। दूसरी तरफ, परिवार के अन्य सदस्यों का मानना था कि सुधेश्वर की हालत बहुत खराब है। सुधेश्वर ने कहा,''जिस तरह से वे मुझे ढाढ़स बंधाते थे, उससे मुझे अच्छा नहीं लगता था। वह यह पूछते थे कि क्या मैंने कोई जीवन बीमा पॉलिसी ले रखी है ? वह मुझे यह जताते थे कि मेरे पास अब ज्यादा दिन नहीं बचे हैं।''

थोड़ा सशंकित होते हुए सुधेश्वर ने विकास सेक्टर में ही काम करनेवाले अपने मित्रों से टीबी के बारे में पूछा। उन लोगों ने उन्हें समझाया कि यदि इलाज की सही पद्धति और खानपान को अपनाया जाये तो टीबी ठीक हो सकता है। सुधेश्वर ने पटना के एक सरकारी अस्पताल से इलाज कराना शुरू किया। उन्होंने नियमपूर्वक दवाएं लीं और आठ महीने का पूरा कोर्स पूरी निष्ठा के साथ किया। उन्होंने कहा, ''जिस तरह की दयादृष्टि से लोग मुझे देखते थे उससे मुझे बहुत बुरा लगता था। ऐसा लगता था मानो वो अपना कान लगाये मेरी अंतिम इच्छा सुनने की कोशिश कर रहे हों।'' जिस संस्थान में सुधेश्वर काम कर रहे थे, उसने उन्हें पूरा सहयोग दिया। उस संस्थान ने इलाज के दौरान तीन महीने की छुट्टी के वेतन में भी कटौती नहीं की।

धीरे–धीरे आयेगा बदलाव

सुधेश्वर को अब टीबी के एक प्रोजेक्ट – अक्षय में काम मिल गया है, जिसका पूरा श्रेय वह अपने भाग्य को देते हैं। उनके नये काम ने उन्हें सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था में टीबी के इलाज की प्रक्रिया को समझने में मदद की। वह कहते हैं, ''टीबी की पुष्टि के बाद मुझे सीधे श्रेणी–2 का इलाज दिया गया, वनिस्पत श्रेणी–1 के।'' इलाज की सामान्य प्रक्रिया के तहत नये मरीजों को पहले श्रेणी –1 की दवाएं दी जाती हैं।

इलाज के दौरान सुधेश्वर के लिए सबसे सुखद याद उनके दो साल के बेटे के साथ जुड़ी है, जो हमेशा उनके साथ रहना चाहता था, जबकि अन्य उनसे सतर्क रहते थे। अपने चेहरे पर मुस्कान बिखेरते हुए सुधेश्वर याद करते हैं, ''यहां तक कि वो मुझे खाना भी खिलाता था और मेरी आंखें आंसुओं से भीग जाया करती थीं।''

अक्षय परियोजना में काम करने के अपने अनुभवों के बारे में सुधेश्वर बताते हैं कि वहां कर्मियों की कमी की वजह से परीक्षण को सही तरह से करने में कठिनाई होती है, साथ ही इलाज और फॉलोअप में भी दिक्कत होती है। वह महसूस करते हैं कि बदलाव आयेगा, पर धीरे–धीरे। आशावादिता के साथ सुधेश्वर कहते हैं, '' स्वास्थ्य प्रणाली अपनी महत्तम क्षमता के साथ काम करना चाहती है लेकिन हममें अगर कोई कमी है तो हमें इसे दूर करने के लिए मिलकर काम करना होगा। '' उनका मत है कि टीबी की चिंताओं को उठाने के लिए एक मंच का होना आवश्यक है।

इलाज शुरू नहीं होने पर फैलता है संक्रमण

वह इस बात को लेकर आश्वस्त हैं कि टीबी से जंग जीत चुके लोगों को ऐडवकसी के लिए यदि एक साथ लाया जाये, तो इसका व्यापक असर होगा। सुधेश्वर कहते हैं, ''यदि टीबी से जंग जीत चुका कोई व्यक्ति किसी मरीज को यह बात कहता है कि वह टीबी से जंग जीत चुका है, तो इसका मरीज के आत्मविश्वास पर गहरा असर पड़ता है।''

सुधेश्वर ने कहा, ''मैं अब टीबी से पूरी तरह से मुक्त हूं। मैं लोगों को खुद का उदाहरण देकर समझाता हूं कि यह सामान्य बीमारी है, जो कि खतरनाक भी हो जाती है। यदि कोई रोगी नियमिति दवाएं नहीं लेता है, तो वह अपने परिवार के अन्य सदस्यों में भी टीबी के कीटाणु बैक्टीरिया फैला सकता है। इसका संक्रमण एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक हवा के माध्यम से होता है।''

वह कहते हैं, ''एक संक्रमित टीबी का रोगी जिसका इलाज ना चल रहा हो तो वह एक साल में लगभग 10–14 लोगों में संक्रमण फैला सकता है।' यदि सरकारी प्रदाताओं से टीबी की दवाएं न ली जायें, तो ये काफी महंगी होती हैं। वह कहते हैं, ''दवा महंगी होने के कारण मरीज नियमित दवा नहीं ले पाते हैं या कोर्स पूरा नहीं कर पाते हैं। अधिकतर रोगी ऐसे होते हैं जो 2–3 महीने दवा लेने के बाद स्वास्थ्य थोड़ा बेहतर महसूस करने पर दवा लेना छोड़ देते हैं।''

टीबी विजेताओं का समूह बनाने की इच्छा

सुधेश्वर टीबी से जंग जीत चुके लोगों के विस्तृत समूह बनाने की आशा रखते हैं। वह यह विश्वास करते हैं कि सिर्फ टीबी से जंग जीत चुके लोग ही यह महसूस कर सकते हैं कि उनके ऊपर क्या गुजरी है और वही जांच, ईलाज और सलाह कराने में मदद कर सकते हैं। वह कहते हैं, ''यदि मैं हर रोज एक टीबी के मरीज का मार्गदर्शन कर सकूं तो मुझे बहुत खुशी होगी। हमें ऐसे मंच की जरूरत है, जहां टीबी के मरीज खुल कर अपनी बात रख सकें।''

सुमन आनंद
22 वर्ष, कॉमर्स स्नातक
पटना

भ्रांतियों को तोड़ सही राह दिखायी

जींस पैंट और भूरे रंग का लेदर जैकेट पहने एक गठीले बदनवाला नौजवान सुमन आनंद दिल्ली विश्वविद्यालय से कॉमर्स में स्नातक की डिग्री ले चुका है। फिलहाल वह कंपनी सचिव बनने के लिए कोर्स कर रहा है और उसने एलएलबी में भी नामांकन लिया है। टीबी से जंग के बारे में सुमन कहते हैं, ''मुझे नहीं मालूम कि टीबी से जंग के मेरे अनुभव के बारे में कहां से शुरू करूं।''

सुमन के मामले में टीबी के दो सबसे सामान्य लक्षण खांसी और वजन घटना ही सामने आये। नवंबर 2016 में नयी दिल्ली में सुमन को लगातार खांसी होने लगी, पर उन्होंने सोचा कि देश की राजधानी की कुख्यात धुंध और वायु प्रदूषण के कारण ऐसा हो रहा है। उन्होंने एक हफ्ते तक इसे नजरअंदाज कर दिया, पर जल्द ही उनका वजन घटने लगा और बुखार रहने लगा। वे कहते हैं, ''मैं इतना कमजोर हो गया था कि ठीक से खड़ा भी नहीं रह पाता था। मैं तुरंत थक जाता था और तुरंत ही बैठना चाहता था, जो कि सामान्य नहीं था।'' एक ऊर्जावान नौजवान सुमन कई प्रकार की गतिविधियों में भाग लेना चाहते थे, पर वह अब नहीं कर पाते थे।

वायु प्रदूषण को दोष देते रहे

वे याद करते हैं, ''जब मैं लगातार खांसता था, तो मेरे दोस्त मुझसे पूछते थे'सुमन क्या तुम्हें विश्वास है कि तुम्हें टीबी नहीं है?'' उन्होंने कभी उस बात का बुरा नहीं माना, क्योंकि वह जानते थे कि वे सभी उनका मूड अच्छा करने की कोशिश करते थे। सुमन को उस वक्त काफी दिक्कत होने लगी जब वह अपने पैरों पर स्थिर खड़ा नहीं रह पा रहे थे। उन्होंने महसूस किया कि वह बुरी तरह से बीमार हो गये हैं। पटना में रह रहे उनके माता–पिता भी अब चिंतित हो उठे थे और वो चाहते थे कि सुमन मेडिकल चेकअप करायें। पर सुमन तब तक धुंध को ही दोष देते रहे। उन्होंने कफ सिरप ली और वायु प्रदूषण से बचने के लिए मास्क लगाने लगे, पर उससे थोड़ी ही राहत हुई। सुमन कहते हैं, ''कुछ दिनों के बाद मेरे पांचवें सेमेस्टर की परीक्षा के पहले दिन हालात काबू से बाहर हो गये। तब मैंने निर्णय लिया कि मैं परीक्षा के बाद घर लौट जाऊंगा।''

हार नहीं मानी

दिसंबर में जब वह पटना पहुंचे तो अपने पिता के साथ अस्पताल गये। वहां उन्हें टीबी होने की पुष्टि हुई। निराशा के भाव के साथ सुमन ने कहा, ''मैं यदि कहूं कि मुझे डर नहीं लगा था, तो यह झूठ होगा'' उन्होंने इंटरनेट पर टीबी के बारे में खोजबीन की, तो उन्हें पता चला कि हर साल टीबी रोग के कारण बड़ी संख्या में लोगों की मौत होती है।

डॉक्टर ने उनसे कहा कि उनके बलगम की जांच के नतीजों से एमडीआर टीबी होने की पुष्टि हुई है और कुछ जटिलताएं भी हैं। सुमन ने कहा, ''जब मैंने दवाएं लेनी शुरू की थीं, तो मुझे यह विश्वास नहीं था कि मैं पूरी तरह से ठीक हो पाऊंगा, पर मैंने सोचा कि एक कोशिश करने में हर्ज ही क्या है, इतनी आसानी से हार मान लेना ठीक नहीं था।'' 20 दिन तक दवा खाने के बाद सुमन सीधे बैठ पा रहे थे। जल्द ही वह अपने बारामदे में और फिर सामने के गेट तक जा पा रहे थे। इससे यह पता चल रहा था कि उनके स्वास्थ्य में सुधार हो रहा था।

सुमन जोर देकर कहते हैं कि टीबी का बोझ उनपर दो वजहों से ज्यादा था : पहला भ्रांति और दूसरा गलत जानकारी। भ्रांति क्योंकि उन्हें यह लगता था कि टीबी मुख्यतः उन लोगों को होता है जो आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के लोग हैं। गलत जानकारी इसलिए क्योंकि वह सोचते थे कि उन्हें यह बीमारी नहीं हो सकती क्योंकि उन्होंने कभी शराब और सिरगेट नहीं पी थी। यहां तक कि वह चाय पीने से भी गुरेज करते थे। सुमन ने कहा, ''मैं सोचता था कि यह मेरे साथ नहीं हो सकता है। मैं अपना ख्याल रखता हूं, साफ–सुथरा रहता हूं, खासकर स्वास्थ्य और स्वच्छता का ध्यान रखता हूं। मैं समझता था कि जो लोग भीड़–भाड़ में रहते हैं या गंदगी में रहते हैं उन्हें टीबी का संक्रमण होता है।''

सुइयों से लगता था डर, फिर भी लिया

सुमन को सूई लेने से काफी डर लगता था। जिस व्यक्ति को सूई लेने से डर लगता हो उसे 60 दिनों तक लगातार सूई लेनी पड़ी। उनके पिता जो एक डाक्टर हैं, उन्होंने उसे सूई लगाने की जिम्मेदारी ली। सुमन का ईलाज दिसंबर 2016 में शुरू हुआ था। जब 1 जनवरी 2017 को उनकी मां उनके कमरे में आयी और उन्हें नये साल की मुबारकबाद दी तो उन्होंने कहा, ''मुझे मुबारकबाद मत दो, जबकि मुझे हर रोज सूई लेनी पड़ रही है।'' उन्होंने मां से विनती की कि पिता से आग्रह करे कि साल के पहले दिन उन्हें सूई ना लगायें।

सुमन याद करते हुए कहते हैं, ''मेरे माता–पिता दोस्त की तरह थे, मैं कोई भी बात उनसे कहने में झिझकता नहीं था, पर उस दिन मुझमें इतना साहस नहीं था कि मैं अपने पिता से सीधे कह सकूं कि आज मुझे इंजेक्शन न लगायें।''हालांकि उनके माता–पिता ने इंजेक्शन न लेनेवाली बात नहीं मानी, एक दिन के लिए भी नहीं। सुमन कहते हैं, ''मुझे बहुत बुरा लगा, पर बाद में मेरी बहन ने बताया कि दोनों इस घटना के बाद रो रहे थे। मैं जानता हूं कि मेरे माता–पिता मेरे सामने खुद को मजबूत दिखा रहे थे।''

टीबी को कलंक नहीं समझा

इलाज के एक महीने के बाद समुन को काफी बेहतर महसूस होने लगा। उन्हें विश्वास हो गया कि यहां से चीजें बेहतर ही होती जायेंगी। सुमन ने मुस्कुराते हुए कहा, ''मेरे परिवार एवं दोस्तों ने बहुत सहयोग किया। मेरे दोस्त शाम के वक्त मुझसे मिलने आते थे।'' सुमन यह महसूस करते हैं कि वह भाग्यशाली रहे कि उनके दोस्तों और परिजनों ने टीबी की बीमारी को कलंक नहीं समझा।

पूरा किया कोर्स

दो महीनों के बाद सुमन ने अपनी पढ़ाई शुरू कर दी, पर उस वक्त उनसे एक इंटर्नशिप का मौका छूट गया। वह कहते हैं, ''मुझे अपने स्वास्थ्य को लेकर किसी प्रकार की दिक्कत अब नहीं थी। मेरा वजन बढ़ना भी शुरू हो गया था। मुझे अपने अंदर से महसूस हो रहा था कि मेरा जीवन अब वापस पटरी पर आ गया है।'' सुमन ने 9 महीनों में अपना ईलाज पूरा किया और फॉलोअप के लिए लगातार जाते रहे।

सुमन एक बात और बताते हैं कि सरकारी अधिकारी/कर्मचारी उनके पास हमेशा आते थे और यह देखते थे कि वह नियमित रूप से दवाएं ले रहे हैं या नहीं? हालांकि उन्हें यह परेशान करनेवाली बात लगती थी, वह सोचते थे कि यह काम तो फोन पर भी आराम से किया जा सकता है। उन्होंने कहा कि उन्हें खुशी हुई जब उनलोगों ने कहा कि उनके मना करने के बावजूद वे लोग आते रहेंगे जब तक वह ठीक नहीं हो जाते।

अपनी बात खत्म करते हुए सुमन कहते हैं, ''हर व्यक्ति टीबी से लड़ सकता है और हर व्यक्ति जीत सकता है। यदि आपको कोई संदेह हो सबूत आपके सामने खड़ा है (अपनी ओर इशारा करते हुए)।''

सत्येंद्र नाथ झा
ग्रामीण चिकित्सा पेशेवर
ताजपुर, समस्तीपुर जिला

निष्ठा और संकल्प से जीती जंग
साहस देख मौत भी वापस मुड़ी

सत्येंद्र बड़ा लक्ष्य रखनेवाले व्यक्ति हैं। वह बिहार और भारत को जल्द से जल्द टीबी मुक्त करने का लक्ष्य हासिल करने के प्रति संकल्पित हैं। वह चुनौतियों से घबराते नहीं हैं। वह चुनौतियों को स्वीकार करते हैं और सभी बाधाओं को दूर करने की दृढ़ इच्छाशक्ति रखते हैं। दो बच्चों के पिता सत्येंद्र कविता भी लिखते हैं। साहित्य के प्रति उनका झुकाव उनके बोलने और लिखने में साफ झलकता है।

कई बार जांच कराने पर टीबी की पुष्टि नहीं

टीबी से संक्रमित अन्य मरीजों के विपरीत सत्येंद्र टीबी के कुछ लक्ष्णों से वाकिफ थे। उन्होंने जरूरी जांच कराये, पर रिपोर्ट नकारात्मक थे। सत्येंद्र याद करते हुए कहते हैं, ''जब जांच रिपोर्ट में टीबी की पुष्टि नहीं हुई तो मैं उससे संतुष्ट नहीं था। मेरी हालत और लक्षण ऐसे थे जिससे मैं महसूस करता था कि जांच रिपोर्ट को सकारात्मक आना चाहिए था।''

सत्येंद्र समस्तीपुर के टीबी केंद्र के डॉक्टर से परामर्श लेने गये। वहां भी बलगम जांच के परिणाम में टीबी की पुष्टि नहीं हुई, पर सत्येंद्र फिर भी आश्वत नहीं हुए। उन्हें महसूस हो रहा था कि कहीं कुछ गलत है। उन्होंने दरभंगा में भी टेस्ट कराये पर वहां भी पुष्टि नहीं हुई। सत्येंद्र ने कहा,''मैं सरकारी सुविधा केंद्रों में की गयी टीबी की जांच से संतुष्ट नहीं था।''

सत्येंद्र पटना में एक निजी अस्पताल के डॉक्टर के पास गये। एक जांच करने और रिपोर्ट देखने के बाद डॉक्टर ने सत्येंद्र से कहा कि उनके दाहिने फेफड़े का एक हिस्सा सिकुड़ गया है। सत्येंद्र ने कहा,''डॉक्टर ने मुझसे कहा कि मुझे सांस लेने में तकलीफ होगी और यदि मैंने सांस लेने में जोर लगाया तो मेरा फेफड़ा फट सकता है और खून भी आ सकता है डॉक्टर ने सत्येंद्र को फेफड़े के उस हिस्से को ऑपरेशन करवा कर निकलवाने की सलाह दी।

सत्येंद्र याद करते हुए कहते हैं कि मुझे बहुत जोरदार झटका लगा। पर खुद को संभालते हुए डॉक्टर से पूछा, ''ऑपरेशन तो बहुत बड़ा मुद्दा नहीं है, मैं वह करा सकता हूं, पर यदि मैं दाहिने फेफड़े का ऑपरेशन कराता हूं तो इस बात की क्या गारंटी है कि भविष्य में वैसी समस्या बांये फेफड़े में नहीं आयेगी।'' डॉक्टर ने कहा कि इस बात की कोई गारंटी नहीं है। उन्होंने पूछा कि क्या यह जरूरी है कि ऑपरेशन पटना में ही कराया जाये? डॉक्टर ने जवाब दिया कि नहीं यह जरूरी नहीं। तब सत्येंद्र ने डॉक्टर से अनुरोध किया कि वह अखिल भारतीय आयुर्वज्ञिान संस्थान (एम्स) नयी दिल्ली में उन्हें रेफर कर दें।

इलाज के लिए जमीन तक गिरवी रखी

दिल्ली जाने से पहले सत्येंद्र परेशानी में थे। वह इस बात को लेकर चिंतित थे कि यदि दिल्ली में भी उन्हें ऑपरेशन कराने के लिए कहा जाता है तो वे रुपये कहां से लायेंगे। बीमार पड़ने के कारण एक तरफ तो वह काम नहीं कर पा रहे थे और दूसरी तरफ इलाज में लगातार पैसे खर्च हो रहे थे। बहुत सोचने के बाद सत्येंद्र ने अपनी गाय और मोटरसाइकिल बेच दी। साथ ही जमीन का हिस्सा भी गिरवी रख दिया। दिल्ली के एक हस्पताल में एमडीआर टीबी की पुष्टि हुई कई बार जांच परिणाम के नकारात्मक आने के बाद आखिरकार 2015 में एम्स में सत्येंद्र को टीबी होने की पुष्टि की गयी। सत्येंद्र कहते हैं, ''19वें दिन मुझे मालूम चला कि मुझे एमडीआर टीबी है। मुझे इसके बारे में पता नहीं था। डॉक्टर ने मुझे बताया कि यह बहु–ड्रग–प्रतिरोधी टीबी है।'' दिल्ली में उनका इलाज शुरू हुआ और उन्हें उनके जिले के अस्पताल में रेफर कर दिया गया,जहां उन्हें दवा दी जाने लगी। सत्येंद्र ने कहा, ''जब मैंने दवाएं लेनी शुरू की, तब मैंने विभिन्न प्रकार की परेशानियां महसूस कीं, जैसे उल्टी आना, सिर में दर्द होना आदि। मुझे इस बारे में दिल्ली में ही सचेत किया गया था,लेकिन मेरी परेशानियां इतनी अधिक अत्यधिक बढ़ गयीं की उन्हें बर्दाश्त करना कठिन हो गया था दिल्ली में डॉक्टर से परामर्श लेने के वक्त उनके भाई साथ में थे। उन्होंने याद दिलाया कि दवा लेने के दौरान इस तरह से दुष्प्रभाव सामान्य हैं। सत्येंद्र कहते हैं कि उनके भाई के शब्दों ने हमेशा उन्हें ऊर्जा दी। सत्येंद्र को परिवार का पूरा समर्थन मिला था। एक हल्की सी मुस्कान के साथ सत्येंद्र कहते हैं, ''मुझे संक्रामक रोग हुआ था, फिर भी मेरे परिवार ने मुझे बहिष्कृत नहीं किया।''

दोस्त ने हौसला बढ़ाया

सत्येंद्र के दोस्त सुनील कुमार गिरि हमेशा उनके घर जाते और उनसे बातचीत कर उनकी तबीयत के बारे में पूछते रहते थे। सत्येंद्र कहते हैं, ''वह हमेशा मुझे समझाने की कोशिश करता था कि बीमारी ठीक हो सकती है। उससे बातचीत करके मैं खुद को मजबूत महसूस करता था।''

नियमित दवाएं और खानपान

सत्येंद्र ने नियमित रूप से दवाएं लीं। उपलब्धि का भाव लिये सत्येंद्र कहते हैं, ''शुरुआती 6 महीनों में मैंने कई बार ऐसा महसूस किया मानो मौत मेरे सामने खड़ी है, लेकिन मेरे साहस को देख कर वापस मुड़ गयी। धीरे–धीरे दवाओं ने असर दिखाना शुरू किया और बेहतरी के संकेत मिलने लगे।'' शुरुआत में उनकी पत्नी उनके पास बैठ कर उन्हें खाना खिलाती थी।

पर धीरे–धीरे वह छोटे–मोटे काम खुद से करने लगे। सत्येंद्र बताते हैं, ''मैं थोड़ा पैदल भी चलने लगा। मैंने अपनी खुराक पर पूरा ध्यान दिया और धीरे–धीरे मुझे भोजन का स्वाद मिलने लगा।'' जब दवा लेना शुरू किया था उस वक्त उनका वजन 54 किलोग्राम था जो दवाओं के दुष्प्रभाव के कारण घट कर 46 किलोग्राम हो गया था। 24 महीने दवा का कोर्स पूरा करने के बाद उनका वजन 68 किलोग्राम हो गया।

सत्येंद्र स्वास्थ्य–सुविधाओं में कुछ कमियों की भी बात करते हैं। उन्होंने कहा,''इन जांच–प्रक्रियाओं पर से मेरा विश्वास उठ गया था, क्योंकि उनसे मेरी बीमारी की पुष्टि नहीं हो रही थी। जब वही जांच दिल्ली में एम्स में की गयी तो उसमें टीबी की पुष्टि हुई। वर्ष 2025 तक टीबी को भारत से खत्म करने का लक्ष्य रखा गया है, पर सार्वजनिक स्वास्थ्य–सुविधाओं में टीबी के प्रति रवैये में गंभीरता की जरुरत है तभी हम 2025 तक टीबी को खत्म कर पाएगें।''

टीबी चैंपियन विस्तृत समूह बनायें

सत्येंद्र चाहते हैं कि टीबी से जंग जीत चुके लोग आपस में हाथ मिलायें और एक विस्तृत समूह बनायें, जो टीबी के मरीजों के लिए मददगार हो। उनका विश्वास है कि इस तरह के तंत्र का लोगों को टीबी केंद्रों तक ले जाने और सही तथा समय पर इलाज शुरू कराने में बहुत योगदान होगा। इस कारण हमें मिल कर आगे बढ़ना होगा, मरीजों से मिल कर उन्हें बीमारी के बारे में बताना होगा और यह सुनिश्चत करना होगा कि समाज में इस बीमारी से जुड़ी भ्रांतियां खत्म हों।

वह कहते हैं,''कई मरीज लक्षणों के बारे में नहीं जानते हैं और वे इसकी परवाह भी नहीं करते। हमें ऐसे लोगों तक पहुंचना होगा और उन्हें बताना होगा कि वजन घटना, भूख न लगना, लगातार खांसी रहना आदि टीबी के लक्षण हैं।''

सत्येंद्र का मानना है कि सरकार के टीबी नियंत्रण कार्यक्रम में जांच को और प्रभावी ढंग से करने की आवश्यकता है। सत्येंद्र कहते हैं, यदि जांच में गड़बड़ी रहती है तो उसके उत्तरदायित्व की भी उपयुक्त व्यवस्था होनी चाहिए। साथ ही टीबी केंद्रों में दवाएं खत्म होने जैसी स्थिति नहीं होनी चाहिए। अधिकारियों को इस बात की जानकारी होती है कि इलाके में कितने टीबी मरीज हैं और उनके लिए कितनी दवाएं चाहिए। इसके लिए उन्हें भरपूर स्टॉक रखना चाहिए।''

दो सालों में सरकार काफी प्रयास कर रही है

इन सबके बावजूद उनका मानना है कि पिछले दो साल से स्थिति में काफी बदलाव आया है। वह कहते हैं,''सरकार बेहतर जांच विशषज्ञों की नियुक्ति करने और आधुनिक उपकरण मुहैया कराने की दिशा में काफी प्रयास कर रही है। कई लोगों की गलत जांच की गयी है और अब जब लोग इसके बारे में बात कर रहे हैं तो सरकार को इस ओर ध्यान देना ही चाहिए।''

पिछले कुछ महीनों में सत्येंद्र ने 12 लोगों को टीबी की जांच कराने में मदद की है। उनमें से पांच को टीबी होने की पुष्टि हुई और उनका इलाज भी शुरू हो गया है। सत्येंद्र टीबी की ऐडवकसी में और सक्रियता से जुड़ने की आशा करते हैं और टीबी के मुद्दों पर किये जा रहे प्रयासों को और आगे बढ़ाना चाहते हैं।

Abhishek Kumar

Abhishek organises a community awareness meeting in the presence of MLA, CMO & CDO at Hajipur.

Abhishek, an entrepreneur who runs a mobile and online travel ticketing shop with his father in his Hajipur town, has now become the face of the End TB campaign in his locality. He is also the member of the Vashali District TB Forum.

Jaganath Prasad

Jaganath with a family affected by TB in Muzaffarpur.

An agriculturalist, who was cured of MDR-TB, Jaganath now provides support to others affected by TB in Muzaffarpur.

Arti Kumari

Arti speaks at an awareness session at a school in Kaira, Muzzafarpur.

A teacher and an MDR-TB survivor and champion, Arti was often blamed for her husband being affected by TB. She now conducts TB awareness sessions in schools in Muzzafarpur. She is also a member of the National TB Forum.

Poonam Kumari

Poonam speaks at a School awareness campaign at Khaira, Jamui.

A paramedical student and an MDR-TB survivor and champion, Poonam now conducts awareness sessions in the community with focus on stigma. She also provides support services to people affected with TB in Khaira.

Rajiv Kumar

Rajiv at a community awareness meeting in Surajgarha, Lakhisarai district.

After losing his mother and sister to TB, Rajiv took treatment and got himself cured of TB. He is now helping his niece in her TB treatment and organising awareness meeting at the Panchayat level in Surajgarha.

TB Champions Today

Ramdayal Mahto

Ramdayal provides support to a health worker during an ACF drive in Faijullahpur, Gopalganj.

Having faced discrimination from the community while on TB treatment, Ramdayal, now leads anti-stigma campaigns. He supports those people on TB treatment in Faijullahpur. The District TB Cell approached him to help them conduct an Active CaseFinding (ACF) drive in the locality.

Satyendra Nath Jha

Satyendra Jha at a meeting with ASHA workers at Tajpur PHC along with MOIC.

Satyendra Jha, an MDR-TB survivor and Champion, faced discrimination from people around him when he was undergoing treatment. He now conducts awareness sessions in the community and collaborates with the District RNTCP structure for effective service delivery.

Sonam Kumari

Sonam, who recently completed her school education, spearheads advocacy on TB in Samastipur. She focuses on reducing TB-related stigma.

Sudeshwar Singh

Sudeshwar meets farmers during an awareness drive in West Champaran.

Sudeshwar is at the forefront of advocacy for eliminating TB in Bihar. He spoke at the inaugural session of the Delhi End-TB Submit chaired by PM Modi in March 2018.

Suman Anand

Suman at a patient counselling session in Patna.

A law student, Suman delayed seeking treatment due to his myths and misconception about TB. Now, he provides psycho social support to those affected by TB and stresses on breaking myths around TB.

Preface

Since 1999, REACH (Resource Group for Education and Advocacy for Community Health) has been engaged in the fight against tuberculosis (TB) through support, care and treatment to patients as well as research, advocacy, public education and communication on the disease. The Tuberculosis Call to Action Project supported by the U.S. Agency for International Development (USAID), has helped us strengthen our advocacy effort and expand our work to Bihar, Jharkhand, Odisha, Assam, Chhattisgarh and Uttar Pradesh.

One of the fundamental and often neglected aspects of the response to TB in India is the role of TB survivors and affected communities. We believe that TB survivors are best placed to understand the struggles of patients and their families, and, hence can play a significant role in complementing the interventions of the health system. Through a mentorship programme, we are committed to providing these TB champions with the support they need to become effective advocates, with a role in policy advocacy, overseeing program implementation, community monitoring and addressing stigma.

As a first step towards this, REACH organised a three-day residential capacity-building workshop for TB survivors from various districts of Bihar in Patna in December 2017. The participants for the workshop were chosen in consultation with the State TB Cell, civil society/NGOs and other stakeholders. Out of 50 applicants, 15 TB survivors were selected to participate in the workshop following an initial short-listing and formal interviews by a panel. The workshop sessions were designed to be as inclusive and participatory as possible in order to facilitate a two-way learning process. By the end of the third day, the participants began the process of preparing their individual advocacy plans based on the framework prepared by REACH. At the end of the workshop, the participants set up a network for Bihar – TB Mukt Vahini -- TB survivors and formally declared it at the valedictory session. Follow-up meetings and discussions as well as a field trip were held in January and February 2018.

The workshop provided a platform for the TB survivors, whom we prefer to address as TB champions, to share their stories with each other and identify their advocacy goals. Their energy and desire to start the process of TB elimination at their villages and municipalities led to the conceptualisation of an anthology of their stories. The stories recount the hardships they have endured, but more importantly, the future they see as TB advocates. By taking the reader through their experiences and vision for the road ahead, our objective is to show that TB is not always a tale of poverty and capitulation.

Dr. Nalini Krishnan
Director, REACH

Introduction

Tuberculosis (TB), a disease with a history that goes back over 15,000 years, continues to haunt humanity in the 21st century. According to the World Health Organisation (WHO), TB is the leading infectious agent killer worldwide. WHO data indicates that in 2016, an estimated 10.4 million people had TB, and nearly 1.7 million died from the disease. India accounts for almost one-fourth of the global TB burden– an estimated 2.8 million - the highest for any single country. In addition, there are about a million missing cases in the country, which have either not been notified to the government or have gone undiagnosed. India also has the highest estimated incidence of Multi-Drug Resistant TB (MDR-TB) – 0.14 million in 2016 according to the Global TB Report 2017 - worldwide.

India has a major role to play in the elimination of the disease and the Government of India has announced its commitment to eliminate TB by 2025. The fight against TB cannot be won without the active engagement and participation of the affected community – including TB patients, their families and communities. This book, a collection of narratives of ten TB survivors and Champions, illustrates their tenacity, resilience and fortitude, and thereby will provide a sense of optimism and hope to others affected by TB.

In December 2017, REACH organized a capacity-building workshop in Patna which provided a platform for TB survivors to share their experiences and build a rapport with each other. The workshop and a follow-up meeting enabled the creation of a network of TB survivors who are now spearheading TB advocacy in Bihar. "Only those who have endured the disease will know what a patient encounters. In such a scenario, it is important to develop a network of TB survivors for advocacy efforts and to create platforms at which patients can speak their hearts out," says Sudeshwar Singh, a TB survivor and Champion, who spoke at the inaugural session of the Delhi End-TB Summit 2018 chaired by Prime Minister Narendra Modi.

Meeting people who have been through similar experiences has also re-energised some of the TB survivors. "I thought I would have to keep a low profile after I was cured. But after I met the others (survivors) at the workshop, I was inspired to get back to a normal life. I realised I should tell the community what I know (about TB) and help them in whatever way I can," says Satyender Nath Jha, a rural medical practitioner from Samastipur.

Like Sudeshwar and Satyender, the others featured in this book share their experiences with TB and how their lives were reshaped thereafter. The narratives that follow also recount the socio-economic factors that influence people affected by TB during their treatment. By sharing these stories, the TB Champions hope to draw attention to the stigma that persists, and that many of them experienced. But at the same time, these TB Champions also want to reassure other patients that 'everything will be alright'.

Let's listen to them.

Abhishek Kumar
27, Entreprenuer
Adalpur Village,
Hajipur Block,
Vaishali District

From darkness to light

Abhishek, with his slender frame and clean-shaven face, does not necessarily look his age. He is an entrepreneur who runs a mobile and online travel ticketing shop with his father in his village.

Abhishek was diagnosed with TB in 2014 when he was working as a banquet sales executive at a hotel in Bengaluru. During a regular check-up, a chest X-ray detected an infection in his lungs, and he was subsequently diagnosed with TB. He returned home and approached a doctor at a private hospital, who started him on treatment.

But Abhishek's health didn't improve. In January 2015, with a chronic cough and persistent fever, he went to the government hospital at Hajipur, and then consulted another doctor in Patna. The doctor asked him to repeat his TB tests, which confirmed the TB diagnosis. Though the test results did not indicate any drug-resistance, the doctor instructed him to start treatment for MDR-TB. "In one to two days after starting the medication, my heartbeat increased abnormally. I was not able to sleep either," Abhishek recalls.

Abhishek then decided to consult doctors at a major health facility in New Delhi and and travelled there. "Doctors at the hospital said it was a mistake to have started treatment for MDR-TB without doing the right tests," he says. At the hospital, doctors started him on category II medication. He was then referred back to the TB centre in Hajipur where he continued treatment for three months.

However, his symptoms persisted and there was no visible sign of improvement. In June, Abhishek went to the government hospital again and this time, he was diagnosed with MDR-TB. The treatment went on for 27 months and in all, Abhishek was home for 37 months. "I was bored at home as I was not used to staying in my house for that long. I had been away from home for eight to ten years," he says.

About five months after starting treatment for MDR-TB, Abhishek experienced some side effects. "I was giving a tough time to my friends and family. I was not even able to have a normal conversation with them because of my disturbed state of mind," Abhishek says. He distinctly remembers an incident from December 2015 when some friends and other guests had visited his house. "I did not behave properly with a friend. I even assaulted him. Seeing this, my family was forced to lock me up in a room," Abhishek recollects.

In January 2016, Abhishek attempted to take his life. "My mother saw me and cried out loud. Other family members came rushing and they saved me," Abhishek says. His family took him back to a doctor, who helped him manage the side-effects. His mental health gradually improved.

Abhishek points out that the delays in getting a clear TB diagnosis make it much more difficult for an affected individual. "At the time that I was on treatment, a new TB patient was given category I medication. If that did not work, a patient was put on category II medication. If that too was ineffective, then he or she was tested for MDR-TB. It is possible that the patient had MDR-TB right from the beginning", Abhishek says.

Abhishek's advice for those affected by TB is that they have to be patient. "You will have difficulties such as side effects of medicines but the disease will be cured. Don't listen to the diverse opinions of people around," Abhishek says. He used to search the internet and came across a lot of wrong information about TB.

As a TB advocate, Abhishek vows to share his experiences and knowledge on TB at health facilities where he lives. He also plans to start a nutrition bank with other TB survivors to provide adequate nutritional support to people affected by TB.

Arti Kumar
27, Teacher

Jaganath Prasad
35, Agriculturalist
Muzaffarpur

Ostracised by near and dear, they had each other's backs

Jaganath and Arti are a combination of a bashful husband and an outspoken, brave wife. After successfully defeating TB, they are now embroiled in another battle (albeit a more fun one) – parenting their mischievous five-year-old daughter Antrabharti and four-year-old son Vaibhav.

In June 2011, Jaganath was diagnosed with TB. At that time, he was working in Shillong, Meghalaya but he returned home for the treatment. Despite the treatment, Jaganath's symptoms recurred. His health began to further deteriorate and his family was told that he could have MDR-TB.

As tests for drug-resistant TB were unavailable in Patna at that time, Jaganath's samples were sent elsewhere. In a week's time, he was diagnosed with MDR-TB. Jaganath then stayed in Patna and his brother helped him with the treatment. "Everyone except my brother and my wife ostracised me when I was undergoing treatment. People isolated me and stopped talking to me. I used to cry when other patients asked, "Don't you have any other relatives?" Jaganath says. A teary-eyed Arti interrupts to say that their daughter had been born at that time.

"Initially I was blamed for Jagannath getting TB. People said I brought bad luck as he got a disease when I came into the house. He used to fall ill all the time. My mother in-law even told me to leave one day," Arti recollects bitterly.

At that point, Arti did not know much about TB. It was a difficult time for her - she was pregnant and was also studying for an exam. She was very uncomfortable with the behaviour of the family and the spiteful words from people around her. Jaganath's health was not improving despite the treatment. She was working in a private school and had to spend all her earnings on his treatment.

"The family members used to kick the plates in which he (Jaganath) ate food. He would cover his face as he walked around the house and if he sat somewhere, others would sit at a distance," she says. "They also didn't understand his nutritional requirements. He used to vomit everything he ate. I still remember, one day when our daughter was six days old, he started vomiting profusely. I was alarmed. My father got to know that my mother-in-law had asked me to leave and also told me to leave him," Arti says. But Arti was determined to learn about TB so that she could support her husband. However, when Jaganath weakened further, she was worried that she might become a widow soon. "But I never let anyone know how I felt," she says.

Arti always wanted to become a mother and was ecstatic when her daughter was born. "My in-laws weren't happy that I had a girl. Women who don't give birth to a son face discrimination.

Things reached a point when my in-laws didn't want us to live with them. They were unwilling to support us, especially as he (Jaganath) was unable to go to work," Arti says.

Jaganath continued with his treatment, and they had a second baby. "I used to get such severe stomach aches that I felt it was better to die instead of living like this," she says. A doctor in Patna told Arti that she had probably got TB from her husband. Arti was doubtful but the doctor asked her to start treatment for TB. She took the treatment for a few months but it did not have any effect on her. By now, she was vomiting more frequently. The doctor told her to stop breastfeeding her son and Arti's parents stepped in to look after the baby. Over the next few months, Arti went to several doctors, all of whom changed her treatment regimen.

"My brother was also trying to help me. He borrowed money from friends and relatives to meet the expenses of tests and medicines," Arti says. "Seeing my little children, I felt motivated and wanted to live for them somehow," she remembers with mixed emotions.

Arti wants others affected by TB to know that they should treat TB like any other disease. "If you find out that you have TB or notice the symptoms, you need to approach the right set of people to guide you. People might look at you and stigmatise you. But do not get nervous. If people make you the subject of their jokes, let them do that," Arti says.

Arti and Jaganath feel the patient's family has a significant role to play. "The family has to ensure that a patient takes medicines at the right time. People often do not have the correct information about a disease and they might be told that TB is a terrible disease. It is the responsibility of the family to stand by a patient and ensure that s/he is not ostracised. With their support and care, a patient will be cured much faster," they say.

Jaganath plans to undertake TB-related activities at the village council level. He is going to meet the village head and council members to seek their support in spreading awareness about TB. Aarti plans to collaborate with community development officers and village ward members to orient people about TB. She also wants to teach school children about TB and also tell more people about the TB champions network in Bihar.

Poonam Kumari
22, Student
Khaira Village
Jamui District

When everyone gave up, she stood strong and fought

Poonam is chirpy and charming with a certain childish innocence. She is currently a paramedical student in Patna. She has two younger brothers and the family depends on her father's income, which he earns as a small-scale businessperson. Poonam's experience with TB is a testament to the struggles faced by those affected by TB in India.

In 2014, Poonam was diagnosed with TB and then almost a year later, with MDR-TB. Poonam says she did not have symptoms such as cough or fever. When she was in class 11, she used to attend lectures in Jamui. She used to be extremely tired when she returned home in the evening but thought it was because she was generally weak. One such day, while having dinner, she started to cough incessantly and coughed up blood.

Accompanied by her mother, she went to a doctor in her village but he could not give her a clear diagnosis. When she coughed up blood again after a few days, she went to a doctor in Jamui. There, an X-ray test was taken but the doctor could not establish what was wrong. “He said it could be the result of a cut in my throat. No other tests were conducted there,” she says

As Poonam's health deteriorated further in the next few days, she was taken to Patna and diagnosed with TB. She began medication for TB but the medicines did not suit her and she started to feel itchy all over her body. She approached the doctor explaining the side-effects of the medicines but he refused to change the prescription. Soon, she started to vomit repeatedly as she had to take the medicines on an empty stomach. She says she felt there was no option but to give up the medicines after a few days.

Poonam went back to the doctor in Jamui but he still maintained that she did not have TB. However, he subsequently changed his mind and confirmed her TB diagnosis. Her family was puzzled because of the different test results and the divided opinion of doctors.

At the suggestion of a neighbour, Poonam was taken to a hospital in Patna, where she underwent tests that confirmed MDR-TB. On returning to the village, she started treatment once again. "When I was diagnosed with TB, I didn't think it was a dangerous disease. We got to know its seriousness only after talking to several doctors," Poonam says. "We consulted at least 10 doctors and one of them even said MDR-TB was pre-cancerous ," she exclaims. She was worried about the expenses needed for treatment but was relieved to learn that she could avail free treatment from the public health system. "We couldn't have afforded private treatment that might have cost up to Rs. 15,000 a month. My father has to take care of the education of my brothers as well," she says.

"Earlier, my father never used to take me out. But after I was detected with TB, he took me all around Patna and would spend time with me. He kept telling me to think positively," Poonam says. However, most of Poonam's relatives stayed away from her. She was disappointed that even her cousins maintained a distance. Poonam says she was very disturbed by the harsh and discouraging words her relatives used in conversations with her parents. "They even used to say things like 'there is no point in consulting doctors and taking medicines; it is better to let her die'. My father was also disturbed but he convinced me that things were not as bad as the others were suggesting and asked me to trust him," she says. "My parents and brothers were very supportive; they didn't make me feel like I was going to die."

Poonam's friends also stood by her and there was no deficit in their love and affection. They used to check constantly whether she was taking her medicines regularly. She also explains that her fiancé looked after her. "During the hard times, I got to know who would stand by me when I needed help," Poonam says with resolve.

"I learnt that one shouldn't expect anything from others and the important thing is to stay strong," Poonam says about her experiences over the last three years. In order to remain positive, she used to tell herself that her relatives kept away from her as they believed that she could fight it on her own and come out victorious. At that time, she could not focus much on her academics, but she had decided that she would not quit her studies, come what may.

"I want to tell people that they shouldn't ostracise patients, whatever disease it might be. It's important to meet sick people and give them confidence," Poonam says. She asserts that TB is a curable disease. "Patients should take medicines regularly. I know what it feels like. So, one shouldn't get worried and go down that difficult path. It is important to remain positive," she says confidently. Poonam feels that all TB survivors should come together to give a positive message and boost the morale of those affected by TB.

A lone battle won after losing his mother and sister to TB

Rajiv is an energetic young man who wants to take life one step at a time. After completing his graduation in Political Science, Rajiv now teaches school students to earn a living. His mother and sister died of TB and his father has weakened from old age. His brother is the breadwinner of the family. Rajiv wants to study more but his family circumstances do not allow him to do so, at this point. Nonetheless, he speaks about his hardships with a smile.

Rajiv was diagnosed with TB in 2014. Before that, his mother was undergoing treatment for various ailments and doctors had different opinions on her health. Some doctors suggested it was TB while some others said it could be another infection. However, there was no confirmation or clear diagnosis. At that time, Rajiv was staying in a college hostel in Munger nearly 50 kms from his home in Surajgarha.

"One night, around 10 pm, I received a call that my mother's condition was serious. I couldn't reach home that night because of a lack of transport options; I made it home the next morning. I used the money that I had in my account for her treatment. But she survived only for a few more days," Rajiv remembers painfully.

Rajiv's sister was also undergoing TB treatment at the same time from a doctor in the private sector. He says she would not listen to his advice to seek treatment at a government facility. "She took medicines from a government provider for one to two months but did not believe that she would be cured. She then took medicines from private doctors for about six months," Rajiv says.

Rajiv first experienced the symptoms of TB when he was at a relative's house for a religious function. There, he started to experience severe chest pain and was unsure of what to do and panicked. "After I went back to the hostel, the chest pain recurred. My body started to weaken and I started to have coughing fits every now and then," Rajiv says.

Soon, he returned home and having witnessed first-hand how TB affected his mother and sister, he went to a hospital thinking, 'whatever has to happen will happen'. As expected, Rajiv was diagnosed with TB and was started on treatment. But he did not improve despite taking medicines regularly. Meanwhile, his sputum test continued to be positive and he was puzzled about this, considering that he was taking treatment regularly.

"I was unaware of anything called MDR-TB at that point. I started category II treatment but still wasn't cured. I asked the doctor as to why the medicines weren't effective. The doctor blamed me saying I might not be taking medicines regularly," Rajiv says. Category II medicines were prescribed for another month but Rajiv was confused about what was happening. Rajiv went for tests at Bhagalpur and Lakhisarai, hoping that the test results would be conclusive. He was diagnosed with MDR-TB at both centres. Rajiv then went to Patna for treatment.

All this while, his sister had continued treatment from various private hospitals but her health deteriorated. "One night, we received a call that she had coughed up blood and was critical. My father and I rushed to her house on a bike. There, they used to depend on a quack for medicines and the nearest medical facility was at Surajgarha. We decided to take her to the hospital the next morning. But she passed away the same night, in 2015," Rajiv says.

It took Rajiv three years to be cured completely of TB. "Two people in my family already succumbed to TB. So, how could I win the fight? But, I thought I should at least try. Now, I feel happy that I could fight and win this on my own. There wasn't anyone to help me," Rajiv says.

Rajiv and his brother now look after the treatment of his sister's daughter who also has TB. Rajiv says his experience as a TB patient helps him to deal with the situation better. "After my sister's death, no one from the government came to conduct tests for my niece. We had provided information about her condition to the government doctor but there was no response," he says.

Now, Rajiv intends to help other TB patients and wants to ensure that no one else has to endure the same hardships that he went through. "When a poor person gets TB, they suffer a lot, especially in terms of nutrition. The government should provide them with more facilities during the treatment period," Rajiv suggests.

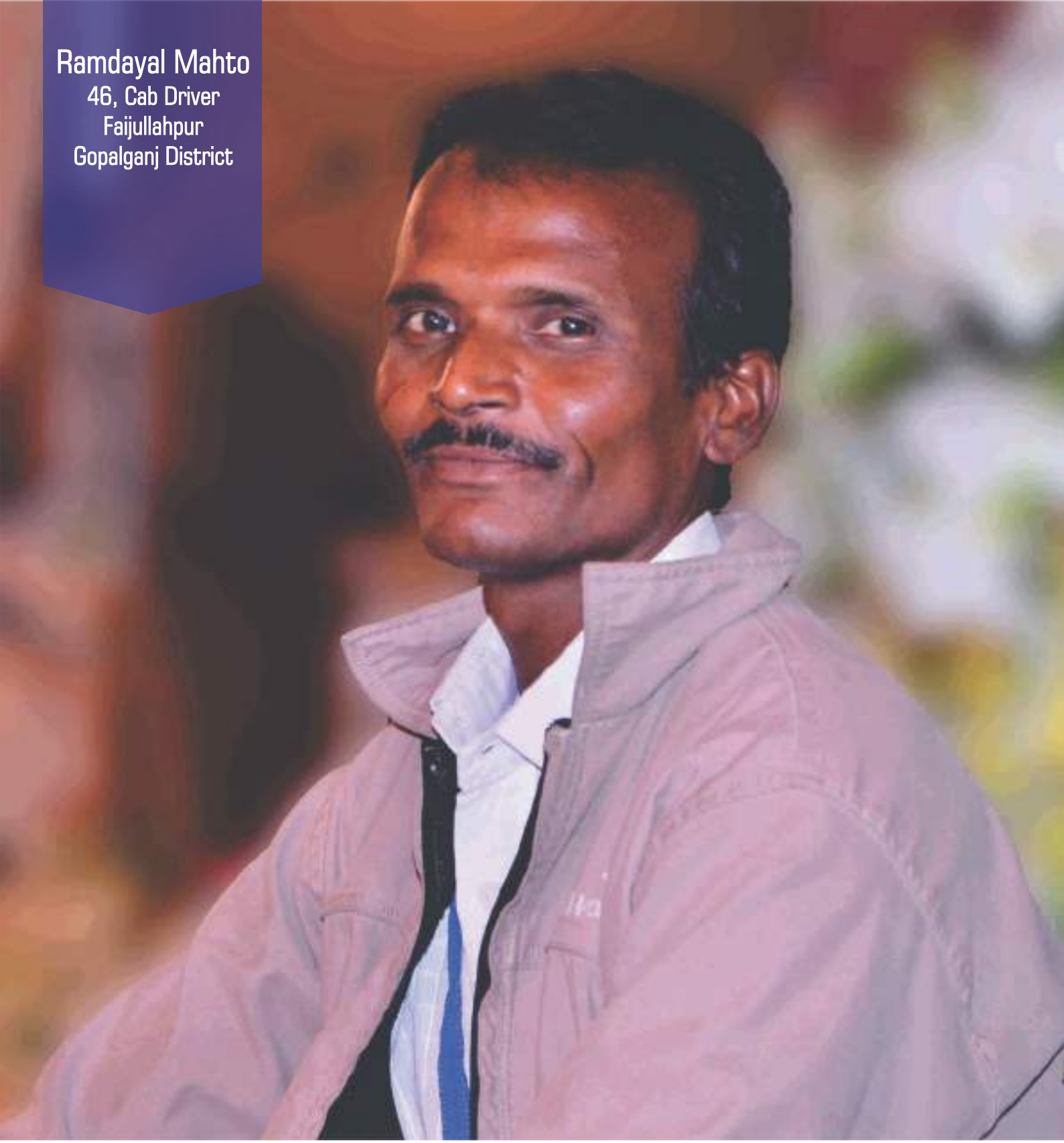

The benefits of awareness and early diagnosis

Ramdayal is sharply clad from head to toe, in a myrtle green suit, a spotless white shirt and formal lace-up shoes. He is quick to spell out the name of his village. Ramdayal, a father of two, previously drove a taxi in Delhi for two to three years after which he returned to his village.

In January 2012, he was diagnosed with TB. "I was aware about TB from banners at the local Public Health Centre (PHC). Therefore, when I had the same symptoms - weight loss, chronic cough and excessive perspiration - all in a span of 15 days, I thought I had TB," Ramdayal says. He got tests done at the PHC and was diagnosed with TB, confirming his suspicions.

Ramdayal immediately started on treatment with the support of a DOTS provider. He took the medicines regularly as instructed and maintained his diet, adhering to all the nutrition requirements as well. At the end of a six-month course of medication, his test results were negative.

"I had the complete support of my family but the villagers slighted me. I felt that it was better to die. Most of my friends also stayed away at that time. The saddest part was that even my children, who might not know anything about the disease, faced stigma because of the attitude their elders had towards me," he recollects agonizingly. However, one of his friends, a businessman, stood by him. He would take Ramdayal to the hospital for check-ups.

Ramdayal used to keep a separate plate and glass for himself during the treatment because he felt he would potentially spread TB to others but his family were very loving and supportive. "My happiest memory from those times is the unconditional support that my family gave me. On the other hand, the treatment meted out to me by the villagers was the most hurtful," he says.

Ramdayal now aims to be a TB advocate. He wants to spread awareness about the disease and help eliminate the stigma associated with it. He is chalking out a plan to achieve his advocacy objectives. "I would like to speak at the gram sabha (village council) about TB. At the block level, I want to advocate human resource issues with the district authorities, including the district magistrate," he says. Ramdayal also intends to engage with district-level self-help groups.

A doctor in the making

After combating TB in a decisive phase of her student life, Sonam recently – completed her examinations. Having opted for the bio-maths stream, she is also awaiting the results of the medical college entrance exams. Sonam is confident but says she would not mind another attempt in case she does not get a seat this time. She is chatty about her love for mathematics but otherwise shy and reticent.

Sonam was diagnosed with TB in May 2016, when she was in Class 11. "I was aware about diseases such as TB and typhoid as I had read about them out of interest because I wanted to study medicine," she says. Her initial symptom was a chronic cough. She went to a private hospital and the doctor prescribed medicines for fever and gastric problems. As she did not get better, she approached the doctor again. This time, she was diagnosed with TB.

"I started to take TB medicines, but, within a month, I got high fever. I decided to go to a government hospital. They confirmed my TB diagnosis," Sonam says. She started on treatment once again with the support of a DOTS provider. By that time, she had lost 15 kgs in two months.

"I had to get the prescription changed in two months because of the side-effects of the medicines. I felt worried that I might not get cured. My studies were affected and I had to appear for board exams soon," Sonam says about her most worrying times. She continued with her treatment until the sputum test was negative and she was declared cured.

"A major cause of concern was the stigma associated with the disease. I am the youngest in my family and most of my family including my parents and my two brothers gave me complete support. We did not let the other relatives or villagers know about the disease because of the stigma," Sonam says.

Sonam's school authorities allowed her to take leave and helped her to sort out attendance issues. She says the people at her coaching centre, where she attended medical entrance coaching classes, also supported her. However, she had to stop taking tuitions for children, as her health did not permit her to do so.

Going forward, Sonam wants to take an active part in TB advocacy. "I am planning to organise monthly activities on TB for gram sabha (village council) members. I would also like to organise a TB awareness workshop at my school," she says. Sonam also aims to work locally with Anganwadi and health workers to spread awareness on TB.

A TB missionary, a tinker with a plan

Talk to Sudeshwar for 10 minutes and you will feel recharged. After having defeated TB personally, Sudeshwar has vowed to dedicate the rest of his life to supporting the TB response. In addition to advocacy initiatives related to TB, Sudeshwar also works with various farmer collectives. He is knowledgeable, energetic and a man with a plan.

In 2010, Sudeshwar was diagnosed with TB while he was employed with a non-governmental organisation (NGO) that worked for the prevention of early marriages. His symptoms included excessive perspiration, chest pain, fever and weight loss. His weight dropped from 84 kg to 72 kg in a matter of a few weeks.

Sudeshwar wasted no time and consulted a physician who asked him to get an X-ray done. The X-ray indicated the presence of fluid in his lungs. Subsequent test results confirmed TB. Sudeshwar was perplexed, thinking "what now?," as he was the sole breadwinner for his small family that included his wife and a two-year-old son. His wife, however, was supportive and constantly reassured him that "everything would be alright." On the other hand, other family members were under the impression that Sudeshwar had a terminal condition. "The manner in which they tried to console me didn't make me feel comfortable. They used to ask whether I had life insurance coverage. They made me feel as if I didn't have many days left to live," recalls Sudeshwar.

A little apprehensive, Sudeshwar asked some of his friends in the development sector about TB. They convinced him that TB is a curable disease if the treatment regimen is followed. Sudeshwar sought treatment at a government hospital in Patna, started the medication promptly, and completed the course in eight months. "The way people used to look at me with pity bothered me. It was as if they were lending their ears to listen to my last wish," he says. However, the organisation Sudeshwar worked for gave him complete support. His salary was not deducted, though he was absent from work for three months during the treatment.

Around this time, Sudeshwar also got a job with a TB project – Project Axshya -- and he attributes that to luck. His new job helped him to understand the structure of TB treatment in the public health system. "I was actually given category II TB treatment straight after diagnosis instead of category I," he says. As per the usual procedure, category I drugs are administered to new patients.

Sudeshwar's happiest memory during the treatment is associated with his two-year-old son who always wanted to be beside him. "He even used to feed me and I would get teary-eyed," he remembers with a smile taking over his countenance.

Sudeshwar is quick to point out the shortage of manpower to effectively manage diagnosis, treatment and follow-up. He also had the chance to speak to health workers involved in the TB programme about the shortcomings he noticed. He feels change will come about, but only gradually. "The system wants to function optimally, but if there is any deficiency, we will have to work towards removing it," Sudeshwar says optimistically. He is of the opinion that it is important to have a community platform to raise concerns about TB.

He is confident that bringing TB survivors together for advocacy will have an impact. "When a survivor says to other patients that he/she is a TB champion, that instils confidence in the patients," Sudeshwar says.

"I'm completely TB-free now. I share my example with others to convince them that it's a common disease, which can be dangerous at the same time. If one doesn't take medicines regularly, s/he could also affect the family, as the TB bacteria spreads from person-to-person through air. If we take the right precautions, we can prevent its transmission," Sudeshwar says.

"Every person with active TB, if left untreated, has the potential to infect 10-15 persons per year," Susheswar says. TB drugs are expensive if they are not sourced through government providers. "Patients may not take medicines regularly or may not compete the full course. Most of them stop medication when they feel their health has improved after two to three months of starting treatment," he says.

Going forward, Sudeshwar hopes to build a larger network of TB survivors, as he believes only they know what patients experience and can help improve diagnosis, treatment and counselling at all levels. "If I can give guidance to at least one TB patient a day, I'll be happy. We need platforms where TB patients can speak their hearts out," he says.

Suman Anand

22, B.Com Graduate

Patna

Breaking myths, correcting opinions

“I don't know where to start from when I share my experience on TB. Things weren't as easy as they seem now,” says Suman, with his well-built physique clad in a brown leather jacket and a pair of denims. A B.Com graduate from Delhi University, Suman is currently pursuing a Company Secretary course and has also enrolled in Bachelors in Law.

The first warning signs for him were cough and weight loss – two common symptoms of TB. In November 2016, while in New Delhi, Suman started to cough frequently, but he assumed it was the result of the national capital's notorious smog and poor air quality. He ignored it for a week, but soon he started to lose weight and developed an intermittent fever. “I got so weak that I couldn't even stand properly. I started to feel tired easily and wanted to sit down every now and then, which wasn't normal,” he says. An exuberant young man, Suman likes to be involved in some activity or the other, but found he could not do that any longer.

“When I used to go into a coughing fit, my friends would ask me, 'Suman, are you sure you don't have TB?'” he recalls. However, he never took offence as he was certain that they were just joking.

Suman grew more concerned when he realised he was not steady on his feet any more. He felt that he was becoming terribly ill. His parents, who live in Patna, were also concerned by now and wanted him to get some tests done. But Suman continued to blame the smog. He tried a cough syrup and wore an air pollution mask, but the relief was only short-lived. “A few days later, on the day my semester exams were scheduled to begin, things got out of hand. I decided to return home after the exams,” Suman says.

After he reached Patna in December, Suman and his father went to a hospital. There he was diagnosed with TB. “I would be lying if I said I wasn't terrified,” Suman says with evident distress. He searched the Internet and discovered a large number of people died of TB every year.

“Even when I started to take medicines, I had no faith that I would be completely cured, but I thought, let me try, it's not right to concede defeat so easily,” Suman says. About 20 days after starting on treatment, Suman could sit upright. Soon, he could go to his balcony and then to the front gate – signs that his body was starting to recover.

Suman asserts that the effects of TB weighed heavy on him for two reasons: first, myth and second, misconception. Myth, because he was under the impression that TB was a disease that only affected the poor. Misconception, because he thought he would be immune to the disease as he neither consumed alcohol nor smoked. He even avoided beverages like tea. “It can't happen to me, I thought. I take care of myself, I am clean and am particular about health and hygiene. I thought only people who lived in crowded or dirty conditions got TB,” says Suman.

Suman was also candid about his fear of injections. For someone with this fear, he had to get injections continuously for 60 days. His father, who is a doctor, used to give him the injections. Suman's treatment started in December 2016, and when his mother was in his room to wish him a Happy New Year on 1 January 2017, he told her, “Don't do this when I have to take injections every day.” He pleaded with her to request his father to skip the injection on New Year's Day.

“My parents are like friends and I have never been afraid of telling them anything. But, that day, I didn't have the courage to tell my father directly [to skip the injection],” Suman recalls. However, his parents refused to forgo the injection even for a day. “I felt very bad, but later my sister said both my parents were crying after the incident. I knew that my parents were pretending to be strong in front of me,” Suman says.

A month into the treatment, Suman started to feel much better. He believed that things would only start to improve from that point. “My family and even my friends were very supportive. My friends used to visit me regularly in the evenings,” says Suman was a smile. Suman feels lucky that he was not stigmatised by his friends and family.

After two months, Suman resumed his studies but he missed the opportunity of an internship during that period. "I did not have any uneasiness about health any longer. I started to re-gain weight. I started to get a feeling from inside that my life was getting back on track," he says. Suman completed the treatment in nine months and attended regular follow-ups.

Suman also points out that government officials used to visit him frequently to check whether he regularly took his medication. He was initially annoyed as he thought the formality could be done over the phone as easily. He says he felt happy later when they said that they would keep coming, even if he stopped them, until he was cured.

He signs off with the words, "Everyone can fight [TB] and everyone can win. If you have any doubts, the proof is right here in front of you," he says, pointing to himself.

Satyender Nath Jha
Rural Medical Practioner
Tajpur, Samastipur District

Conviction and determination were his saviours

Satyender likes to aim high. He is determined to achieve a TB-free Bihar and India at the earliest. He is willing to accept challenges and is determined to overcome hurdles. Satyender, a father of two, is also a poet. His taste for literature is palpable in his use of literary language, while both speaking and writing.

Unlike many others affected by TB, Satyender was aware of some of the symptoms of TB. When he first fell ill, he got the necessary tests done but the result was negative for TB. “I didn't feel relieved seeing the report. My condition and the symptoms made me feel sure that it (the report) should have been positive,” Satyender recalls.

Satyender went on to consult a doctor at the nearest TB centre. There too, the sputum test came out negative but Satyender was still not convinced. He had a strong feeling that something was wrong. “I was unhappy with the TB tests conducted at government facilities,” Satyender. He then approached a private hospital doctor in Patna. After conducting tests and seeing the reports, the doctor told Satyender that a portion of his right lung had shrunk. “The doctor told me that I would have difficulty in breathing and if I breathe in with a lot of force, the lung might rupture and lead to bleeding,” he says. The doctor suggested that Satyender should have surgery to remove the shrunken part of the lung.

“I was jolted,” Satyender remembers. But, regaining his composure, he told the doctor, “Undergoing a surgery is no major concern, I can do that. But, if I undergo a surgery on the right lung, is there a guarantee that the left lung won't have a similar issue in future?” The doctor said that it could not be guaranteed. He asked whether it was necessary to perform the surgery in Patna, and, on being told no, he requested that the doctor provide him with a referral to the All Indian Institute of Medical Sciences (AIIMS) in New Delhi.

During the days before leaving for Delhi, Satyender was in anguish . He was worried if he would be asked to undergo surgery in Delhi, and about the expenses involved. He had not been able to work much after falling sick. After considerable thought, Satyender sold his cow and motorbike, and mortgaged a piece of land.

After multiple previous negative test results, Satyender was diagnosed with TB at a major facility in New Delhi in 2015.. “On the 19th day, I got to know that I had MDR-TB. I didn't know the full-form and the doctor told me what it meant,” Satyender says.

He began treatment at the hospital in Delhi and was then referred to a facility in his district, where he continued the treatment. “When I started to take the medicines, I began to experience difficulties such as vomiting, headache etc. I was warned about these side effects in Delhi itself but the reality of experiencing these symptoms was traumatic,” Satyender says. On such instances, his elder brother, who was with him while he consulted doctors in Delhi, would remind him that these side effects were normal while taking the medicines. Satyender says his brother's words always re-energised him. Satyender had complete support from his family. “I wasn't ostracised because I had a communicable disease,” he says with a smile.

Satyender's friend, Sunil, frequently visited him and talked to him “He tried to make me understand that my disease was curable. I used to feel strong after such conversations,” Satyender says.

Satyender took medicines regularly. “In the first six months, there were many times when I felt that death was right in front of me but it turned its back every time on seeing my courage,” Satyender says with a sense of achievement. Gradually, the medicines started to be effective and there were signs of progress. Initially, his wife used to help him sit up and would feed him. But, slowly, he could do small things on his own. “My health improved in the next six months. I started to go for walks. I paid attention to my diet and I also regained the taste of food gradually,” Satyender recollects. He was 54 kg at the time of starting the treatment and then it dropped to 46 kg because of the side effects of the medicines. On completing the course of medication at the end of 24 months, he weighed 68 kg.

Satyender also talks about the insouciance in the functioning of certain health facilities. “I lost faith in the process. Our (India's) target is to eliminate TB by 2025. But we have a lot to do if we are to achieve this” Satyender says.

Satyender wants TB survivors to join hands and create an expanding network that can act as a support system for TB patients. He believes that such a system will have a huge role to play in getting people to the test centres at the right time and enabling them to begin the right treatment. “For that, we will have to move forward together, meet patients, educate them about the disease, and ensure that society does away with the stigma associated with the disease,” he says enthusiastically. “Many patients don't know the symptoms. We will have to reach such people and tell them that prolonged coughing, weight loss, lack of appetite etc. are all symptoms of TB,” he says.

Satyender feels that tests should be conducted more effectively through the government's TB program. “If there are errors in the tests, those responsible should be held accountable. Also, there shouldn't be a situation in which medicines are out of stock. The authorities have all the required information about the number of patients in an area and adequate stock has to be maintained at all times,” Satyender says.

Nevertheless, he observes that things have been looking up over the last two years. “The government is making an effort to appoint better technicians and improve the equipment. There were too many wrong test results and when the public started to talk about it, the government had to do something,” Satyender says.

In the last few months, Satyender has helped 12 individuals to get TB tests done. Five of them tested positive and their treatment has begun. Satyender also hopes to involve himself in more advocacy efforts and increase the attention given to TB-related issues

TB Mukt Vahini Network, Bihar

Community engagement has been identified as a priority intervention in the move towards a TB- Free India under the new National Strategic Plan. Globally, there is growing recognition that affected communities – TB survivors, patients and their families – must play a greater role in the response to TB. Community participation is the need of an hour for reducing TB stigma, and improving adherence and for supporting patients through the National TB control program towards a more people-centred approach.

With the role of TB survivors being central to community engagement in TB, it has become imperative to build the capacity of TB survivors to engage them in a more meaningful manner at every point in the care cascade.

Formation of TB Mukt Vahini

REACH along with the State TB Cell, Bihar, organised a state-level capacity-building training workshop in Patna in December 2017 for selected TB survivors. It was during this training that the trained TB survivors decided to form a state-level network of TB survivors - TB Mukt Vahini (TMV).

The role of the TB Champions can be categorised under three broad areas - awareness generation, advocacy with key stakeholders and treatment support activities.

Network Expansion: Membership and Geographical Coverage

The network of TB survivors was initiated in Bihar with 13 TB Champions after the capacity- building workshop. These 13 TB Champions then identified other TB survivors in their districts and sub-districts through the District TB Cell (DTC) and ASHA workers to expand TMV. Currently, over 200 members are associated with the network with the aim of strengthening the TB Control Program.

The activities of the network include:

- Patients support
- TB awareness
- Advocacy with community stakeholders

The members work in collaboration with the State and District TB Cells in alignment with the RNTCP activities.

Community Representation in Various Fora:

Network members are also included as community representatives in various fora at the national, state and district levels. TMV members were invited to the Delhi End TB Summit-2018 chaired by Honourable Prime Minister of India Shri Narendra Modi. The Central TB Division has also sought the participation of TMV members in High-Level Committees on TB-HIV Convergence and Digital Innovations to address TB.

TB Mukt Vahini has demonstrated TB survivors coming together in a structured and cohesive manner can lead to the augmentation of the services provided by the government, reaching the hitherto unreached population and advocating for enforcement of existing guidelines for effective treatment adherence.

From TB Survivors To

TB Champions - Capacity-building workshop

Notes

From TB Survivors to TB Champions: Stories from Bihar records, for the first time, the voices of Bihar's TB (tuberculosis) champions and the challenges that they and others affected by TB face. The personal stories in this book are testimony to the strength and resolve with which they won their fight against TB. These TB Champions are today powerful advocates, working to support and strengthen India's response to TB.

REACH

(Resource Group for Education and Advocacy for Community Health)

E-17, Second Floor, Defence Colony, New Delhi - 110024

Phone: 011-49055686 |Email: reach4tb@gmail.com / tbcalltoaction.reach@gmail.com

www.reachtbnetwork.org | www.media4tb.org

www.facebook.com/SPEAKTB @speakTB